# सन् सत्तावन के भूले-बिसरे शहीद

उषा चन्द्रा

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

# सन् सत्तावन के भूले-बिसरे शहीद

उमा चन्द्रा

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

कार्तिक 1908     नवम्बर 1986

प्रकाशन विभाग

मूल्य 20.00

निदेशक प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित।

विक्रय केन्द्र ● प्रकाशन विभाग

सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनॉट सर्कस, नई दिल्ली 110001

कामर्स हाउस, करीमभाई रोड, बालार्ड पायर, बम्बई 400038

8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता 700069

एल० एल० आडीटोरियम, 736 अन्नासलै, मद्रास 600002

बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना 800004

निकट गवर्नमेंट प्रेस प्रेस रोड, त्रिवेन्द्रम-695001

10-बी स्टेशन रोड, लखनऊ-226019

राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय बिल्डिंग, पब्लिक गार्डन्स, हैदराबाद-500004

मुद्रक गोयल प्रिंटर्स, भोलानाथ नगर, दिल्ली-110032

## समर्पण

मृत्यु
कैसी भयंकर पराजय
आज तुम्हारी
जिन्हें छीन लिया तुमने हमसे
वह खड़े हैं
दुख मे, सुख मे
प्रेरणा बनकर
आज भी
साथ हमारे।

बप्पा को

उषा

# दो शब्द

स्वतन्त्रता का इतिहास रक्त से लिखा जाता है। अनगिनत बलिदानियो से देश के इतिहास का निर्माण होता है। स्याही तो घटनाओ को कलमबद्ध करने का महज माध्यम हो सकती है।

1857 की क्रान्ति ने देश के इतिहास मे एक नया अध्याय जोड दिया। क्रान्ति का मुख्य केन्द्र दिल्ली, उत्तर प्रदेश, बिहार तथा मध्य भारत थे, परन्तु दूर दूर तक क्रान्ति के सिहनाद की प्रतिध्वनि फैल गयी। औरगाबाद, जलपाईगुडी, पोरहट, सबलपुर, नारगुण्ड, कोल्हापुर और ढाका जैसे दूरवर्ती स्थानो पर भी भारतवासियो ने अग्रेजो से डटकर लोहा लिया।

1857 की जनक्रान्ति को केवल सिपाहियो अथवा असतुष्ट ताल्लुकेदारो का विद्रोह कहकर टाल देना इतिहास के साथ अन्याय करना है। इतिहासकार मालेसन ने लिखा है कि अवध, रुहेलखड व बुदेलखड के अधिकाश लोग अग्रेजो के विरुद्ध उठ खडे हुए थे। ग्रामवासियो को क्रान्तिकारियो के छुपने के गुप्त स्थान पता रहते थे, वे उनके साथ कभी विश्वासघात नही करते थे। बिहार मे अमरसिह कैमूर की पहाडियो मे छुपे हुए थे। छापामार युद्ध के द्वारा उन्होने अग्रेजो को नाको चने चबवा दिये थे। पहाडियो के निकटवर्ती ग्रामो के निवासी अमरसिह के रहने के स्थान से परिचित थे, परन्तु उन्होंने कभी विश्वासघात नही किया। पोरहट के राजा अर्जुनसिह के सकेत-मात्र से उस क्षेत्र की दुदमनीय जातिया क्रान्ति मे कूद पडी। ऐसी क्रान्ति को जनक्रान्ति न कहकर और क्या कहना उपयुक्त होगा?

1857 की क्रान्ति मे हिन्दू तथा मुसलमानो ने कधे से-कधा मिलाकर युद्ध मे भाग लिया। समस्त राष्ट्र ने दिल्ली के बादशाह बहादुरशाह जफर के नेतृत्व मे युद्ध लडने का निर्णय लिया। बहादुरशाह जफर ने भारतीय जनता की भावनाओ का सम्मान करते हुए राज्य-भर मे गो-हत्या पर प्रतिबध लगा दिया। बादशाह ने युद्ध के लिए हिन्दू तथा मुसलमान दोनो का ही आह्वान किया। हिन्दू और मुसलमान दोनो का ही एक लक्ष्य था—अग्रेजो का समूल नाश!

1857 की जन-क्रान्ति मे योगी, फकीर, दूत, सदेशवाहक स्थान स्थान पर जाकर क्रान्ति की अलख जगा रहे थे। मौलवी अहमदशाह राजनैतिक सन्यासी थे। उनके साथ पताका और नक्कारा रहते थे। उनके शब्दो को सुनकर लोगो के हृदय मे उत्साह भर उठता था और वे दृढ सकल्प कर लेते थे कि देश के लिए अपने प्राणो को न्यौछावर कर देंगे। शहजादा फिरोज का दिल्ली के शाही परिवार से सबधित थे परन्तु उन्होने छोटी सी आयु मे ही देश के लिए फकीरो के से वस्त्र धारण किये। पीर के वेष मे सफेद घोडे पर बैठकर, हाथ मे क्रान्ति की पताका

लिये, वह सिपाहियो का नेतृत्व करते थे। सार्जेंट फार्क्स माईकेल ने क्रांति का विवरण देते हुए लिखा है कि वह अपनी सेना के साथ कूच कर रहे थे। रास्ते मे उन्होने एक नगे फकीर को देखा, जिसका शरीर बहुत सुडौल था। उसका सारा सिर मुडा हुआ था और मध्य मे बालो की एक चोटी थी। उसके सारे मुख पर लाल और सफेद रग पुता हुआ था। वह चीते की खाल पर बैठा था तथा माला जप रहा था। एक सेनाधिकारी ने कहा—"यह व्यक्ति जोगी है और किसी का कुछ नही बिगाड सकता।" अभी शब्द मुह से पूरी तरह निकले भी नही थे कि जोगी ने चीते की खाल के नीचे से पिस्तौल निकालकर दाग दी। ऐसी घटनाए दिन-प्रति दिन होती रहती थी।

1857 के स्वतत्रता सेनानियो के अदम्य उत्साह एव अपूर्व बलिदान की कहानी पढकर आज भी मन प्रेरणा और श्रद्धा से भर उठता है और हृदय श्रद्धा से नतमस्तक हो जाता है।

कुछ इतिहासकारो का मत है कि इन क्रातिकारियो का राष्ट्रीयता की परिभाषा से परिचय नही था तथा ये लोग व्यक्तिगत कारणो से युद्ध मे सम्मिलित हुए। इन महान शहीदो का युद्ध मे सम्मिलित होने का कोई भी कारण रहा हो, परतु एक बार अग्रेजो के विरुद्ध उठ खडे होने के बाद उन्होने पीछे मुडकर नही देखा। ये वीर सेनानी बडे से बडा त्याग करने मे भी नही हिचकिचाए।

क्राति के कुछ अग्रणी नेता विख्यात हो जाते है, परतु दुर्भाग्यवश कुछ की वीरगाथाए दस्तावजो और पुस्तकालयो की अलमारियो मे बद होकर रह जाती है। इस पुस्तक मे 1857 के कुछ अल्पज्ञात शहीदो को लुप्तप्राय पुस्तको और अभिलेखागारो से निकालकर देशवासियो के सम्मुख लाने का प्रयास किया गया है। आशा है, इनके अनुपम बलिदानो की कहानिया पढकर भारतवासियो के हृदयो मे देशभक्ति तथा आत्मत्याग की भावना दृढ हो उठेगी।

उषा चन्द्रा

# विषय-सूची


| | |
|---|---|
| मौलवी अहमदशाह | 1 |
| अजीमुल्ला खा | 8 |
| राणा वेनी माधो सिंह | 14 |
| गोंड राजा शंकरशाह | 19 |
| नवाब तफज्जुल हुसैन | 23 |
| जैतपुर की रानी | 28 |
| राधा गोविंद | 30 |
| वली दाद खा | 35 |
| नर्तकी अजीजन | 37 |
| वरत खा | 39 |
| अमर सिंह | 45 |
| रानी द्रौपदी बाई | 51 |
| राजा अर्जुन सिंह | 54 |
| खान बहादुर खा | 59 |
| नवाब नूर समद खान | 63 |
| राव तुलाराम | 67 |
| शहजादा फिरोजशाह | 71 |
| रावसाहब | 76 |
| रामगढ की रानी | 81 |
| इंजीनियर मोहम्मद अली खान | 83 |
| सुरेंद्र साई | 89 |
| वृंदावन तिवारी | 93 |
| अमझेरा के राजा वरतावर सिंह | 96 |
| भास्करराव वावासाहव | 100 |

# मौलवी अहमदशाह

होम्स के अनुसार 1857 के विप्लव मे जिन लोगो ने हमारे विरुद्ध युद्ध लडा उनमे मौलवी अहमदशाह सबसे अधिक योग्य एव दृढ सकल्प व्यक्ति थे। वे अनायास ही राजनीतिक रगमच पर अवतरित हुए। यह निश्चयपूर्वक कहना कठिन है कि वे कौन थे तथा कहा से आये थे। एक इतिहासकार के अनुसार वे पदच्युत तालुकेदारो मे से एक थे। किन्तु कुछ अन्य इतिहासकारो के अनुसार वे मद्रास के निवासी थे। जनवरी 1857 के आरभ मे मद्रास शहर की दीवारो पर एक घोषणा-पत्र चिपकाया गया जिसमे अग्रेजो को देश से बाहर निकाल देने के लिए भारतवासियो का आह्वान किया गया था। घोषणा पत्र मे लिखा हुआ था—धर्म मे विश्वास रखने वालो को विश्वासघातियो के विरुद्ध उठ खडा होना चाहिए और उन्हे देश से देना निकाल चाहिए। अग्रेजो ने न्याय की तुला को उठाकर एक ओर रख दिया है। अब एक ही तरीका है—'धर्म युद्ध'। सभवत यह घोषणा पत्र मौलवी अहमदशाह तथा उनके साथियो द्वारा लिखा गया था।

मौलवी अहमदशाह का नाम कही अहमदशाह, कही अहमदुल्लाशाह तथा कही सिकदरशाह लिखा हुआ है। वह सुन्नी मुसलमान थे तथा उनका परिवार धनाढ्य था। वह विद्वान व्यक्ति थे तथा अग्रेजी भाषा का उन्हे अच्छा ज्ञान था। क्राति के समय उनकी आयु उनतालीस-चालीस वर्ष की थी। इस प्रकार उनका जन्म लगभग 1818 मे होना चाहिए। मौलवी साहब रूपवान व शिष्ट व्यक्ति थे। कहते है कि मौलवी अहमदशाह को किसी पीर ने स्वतत्रता सग्राम मे कूद पडने के लिए प्रेरित किया था।

मौलवी अहमदशाह युवावस्था मे ही फकीर बन गये थे और वे देशवासियो मे स्वतत्रता का मत्र फूकने के लिए अपने दस-पद्रह साथियो के साथ मद्रास से लखनऊ पहुचे और उन्होने अग्रेजो के विरुद्ध धर्म-युद्ध की घोषणा की। सैयद कालउद्दीन हैदर हसनी हुसैनी ने लिखा है—"अहमदुल्लाशाह फकीर, रहने वाला मन्दरास (मद्रास) या दक्कन का, कई बरस से लखनऊ मे घसियारी मडी मे रहा करता था, मशहूर नक्कारशाह था।"

लार्ड डलहौजी ने अवध को बडे ही अन्यायपूर्ण ढग से अग्रेजी राज मे विलय कर लिया था। 1847 मे नवाब वाजिद अली अवध की राजगद्दी पर बैठे। अग्रेज नित्य ही नवाब के शासन मे हस्तक्षेप किया करते थे। अवध का धन वैभव कल्पनातीत था और यह डलहौजी के लिए बहुत बडा प्रलोभन था। उसने घोषणा की कि नवाब वाजिद अली चरित्रहीन एव अयोग्य शासक है, इसलिए अवध के राज्य को अग्रेजी राज्य मे मिला लेना चाहिए। लार्ड

डलहौजी की आज्ञा से लखनऊ के रेजिडेंट आउट्रम ने नवाब के सम्मुख एक कागज प्रस्तुत किया जिस पर लिखा हुआ था—"मैं (वाजिद अली) खुशी से अपनी सल्तनत कपनी को देने को तैयार हू।" नवाब ने तीन दिन तक कागज पर हस्ताक्षर नहीं किये। अग्रेज अधिकारियो ने नवाब के साथ की हुई सब सधियो को भुलाकर अपनी सेना सहित महल मे प्रवेश किया। उन्होने महल को खूब लूटा और अवध पर अग्रेजो का शासन स्थापित हो गया। अवध को अग्रेजी राज्य मे मिलाने के पश्चात् वहा के बडे-बडे जमीदारो और ताल्लुकेदारो के साथ बहुत अनुचित व्यवहार किया गया। बहुत सी जागीरें जब्त कर ली गईं तथा अनेक गाव छीन लिये गये। अवध के विलय के उपरात मौलवी अहमदशाह ने अपना सारा समय 'धर्म युद्ध' की तैयारी मे लगा दिया।

मौलवी साहब का विश्वास था कि सशस्त्र विद्रोह की सफलता के लिए जनता के समर्थन की आवश्यकता है। उन्होने जनता को जागृत करने के लिए फकीर के वेष मे स्थान स्थान पर भ्रमण किया। उनके आह्वान पर हजारो व्यक्ति एकत्रित हो जाते थे। राष्ट्र की सौ वर्षों मे शनै शनै परतत्रता मे जकडे जाने की लोमहर्षक कहानी सुनकर लोगो का खून खौल उठता था। दिल्ली, मेरठ, पटना, कलकत्ता तथा अन्य कई स्थानो पर जाकर देश प्रेम के इन दीवानो ने क्राति का शखनाद फूका। मौलवी साहब ने बहुत-सी पत्र पत्रिकाए निकाली। उन्होने कई सगठन बनाये। लखनऊ के कोतवाल ने उन्हे चेतावनी दी और शहर से निकल जाने का आदेश दिया। आगरा शहर के मजिस्ट्रेट ने उन पर कडी निगरानी रखने का हुक्म दिया और बाद मे शहर से निष्कासित कर दिया। किंतु मौलवी अहमदशाह बिना घबराये लोगो को अग्रेजो के विरुद्ध भडकाते रहे।

1857 की क्राति के दो मुख्य चिह्न थे—कमल और चपाती। एक गाव का कोई व्यक्ति दूसरे गाव मे चपातिया ले जाता था। वह थोडी-सी चपाती स्वय खाता था तथा बाकी सारे गाव के लोगो मे बाट देता था। इसके उपरात दूसरे गाव का कोई व्यक्ति अगले गाव मे जाता था और इसी प्रकार रोटी बाटता था। इसका अर्थ यह होता था कि उस गाव की जनता क्राति मे भाग लेने के लिए तैयार है। कमल का फूल सेना की एक पलटन से दूसरी पलटन को पहुचाया जाता था। इसका तात्पर्य यह था कि वह पलटन भी क्राति मे भाग लेने को तैयार है। कहा जाता है कि चपाती योजना के सूत्रधार मौलवी साहब ही थे। इस योजना ने क्राति की चिंगारी को प्रज्वलित करने मे बहुत सहायता दी।

फरवरी 1857 मे मौलवी अहमदशाह अपने अनुयायियो के साथ फैजाबाद की एक सराय मे उतरे। शहर के कोतवाल ने नगर के विशेष अधिकारी लेफ्टिनेंट थरबन को बताया कि मौलवी का जनमानस पर गहरा प्रभाव है तथा शहर की शाति भग होने का भय है। अग्रेज अधिकारी भयभीत हो उठे। लेफ्टिनेंट थरबर्न ने मौलवी के पास जाकर उनसे अपने शस्त्र समर्पित करने को कहा। मौलवी साहब ने शस्त्र देना अस्वीकार कर दिया। लेफ्टिनेंट थरबन

ने उनसे पूछा—"आप फैजाबाद कब छोडेगे ?" मौलवी ने लापरवाही से उत्तर दिया—"जब इच्छा होगी ।" अधिकारियो ने मौलवी साहब को जब गिरफ्तार करना चाहा तो उन्होने अपने साथियो के साथ उनका सामना किया। युद्ध मे मौलवी आहत हो गये। उनके तीन साथी मारे गये और पाच बुरी तरह घायल हो गये। मौलवी ने घायल अवस्था मे विवश हो आत्म-समर्पण कर दिया। उनके पास कुछ ऐसे पत्र प्राप्त हुए जिनमे अग्रेजो के विरोध मे रचे गये षड्यत्र सबधी बातें लिखी हुई थी। मौलवी अहमदशाह पर अग्रेजो के विरुद्ध विद्रोह का मुकदमा चला। कनल लेनाक्स ने मौलवी साहब को प्राणदड दिया। जिस समय 1857 का स्वतत्रता सग्राम आरभ हुआ उस समय मौलवी अहमदशाह बदीगृह मे थे।

मौलवी अहमदशाह के जनता पर गहरे प्रभाव के कारण उन्हे दी गई फासी की सजा तुरत कार्यान्वित नही की जा सकी। बदीगृह मे भी सब लोग उनके व्यक्तित्व से प्रभावित थे तथा उनसे सहानुभूति रखते थे। डॉ० नजफअली को 14 वर्ष काले पानी का दड इसलिए दिया गया क्योंकि उन्होने मौलवी को अच्छा खाना पहुचाया था। डॉ० नजफअली बदीगृह के डाक्टर थे।

मौलवी अहमदशाह की गिरफ्तारी के पश्चात् फैजाबाद तथा वहा के आस-पास के क्षेत्रो मे क्राति की ज्वाला भडक उठी। उस समय फैजाबाद मे अग्रेजो की दो पलटने, कुछ अश्वा-रोही तथा एक तोपखाना था। फैजाबाद के देसी सिपाहियो तथा जनता ने मिलकर क्राति का झडा खडा कर दिया। अग्रेज अधिकारी परेड के मैदान मे गये परतु भारतीय सिपाहियो ने साफ-साफ शब्दो मे कह दिया कि वे केवल भारतीय अधिकारियो की आज्ञा का पालन करेंगे। सूबेदार दलीपसिंह उनके नेता थे। उसने वहा उपस्थित सब अग्रेज अधिकारियो को बदी बना लिया। अब सब सिपाही कारागार की ओर बढे। उन्होने बदीगृह की दीवारो को तोडकर मौलवी अहमदशाह को अपना नेता चुना। उन्होने 9 जून को प्रात चारो ओर यह घोषणा करा दी कि फैजाबाद मे अग्रेजी राज्य का अत हो गया और नवाब वाजिद अली शाह के राज्य का शुभारभ हो गया है।

मौलवी अहमदशाह केवल स्वतत्रता सग्राम के योग्य सेनानी ही नही थे बल्कि उच्च-कोटि के मानव भी थे। अग्रेजो ने उन्हे प्राणदड दिया था परतु उन्होने उनसे बदला नही लिया। चार्ल्स बाल ने लिखा है कि बदीगृह से छूटते ही उन्होने एक पत्र कनल लेनाक्स को लिखा जिसमे उन्हे बदीगृह मे हुक्का पीने की अनुमति देने के लिये धन्यवाद दिया गया था। यद्यपि मौलवी साहब ने अग्रेजो को तुरत फैजाबाद छोड देने का आदेश दिया था पर स्वय अग्रेजो की सुरक्षा का प्रबध भी किया। उन्होने अग्रेजो को नावो मे बैठाकर वहा से रवाना करा दिया। उन्हे खाने-पीने के सामान के साथ-साथ खर्चे के लिए कुछ धन भी दिया गया। फैजाबाद शहर मे शाति स्थापित हो गई। मौलवी अहमदशाह की आज्ञा के कारण ही फैजाबाद शहर मे एक भी अग्रेज नही मारा गया।

राजा मानसिंह के हाथ मे जागीर की बागडोर सौपकर क्रातिकारियो ने लखनऊ की ओर प्रस्थान किया। मौलवी की सेना के लखनऊ के पास पहुचने के समाचार से अग्रेजो मे खलबली मच गयी। कैप्टन लारेंस के अधीन एक सेना मौलवी के प्रतिरोध के लिए भेजी गयी। चिनहट के पास महावीरजी के मदिर के निकट दोनो सेनाओ के बीच घमासान युद्ध हुआ। अग्रेज सेना की बुरी तरह पराजय हुई। मौलवी अहमदशाह ने अग्रेजो को बेलीगारद मे खदेड दिया तथा स्वय लखनऊ मे प्रवेश किया।

10 जून तक लगभग समस्त अवध राज्य अग्रेजो की पराधीनता से मुक्त हो गया। इतिहासकार फारेस्ट का कहना है--"दस दिन के अदर अवध से अग्रेजी राज सपने की तरह मिट गया।" अवध के विविध भागो से स्वतत्रता सेनानी लखनऊ आ-आकर बेगम हजरत महल के झडे के नीचे एकत्रित होने लगे। अब मौलवी अहमदशाह के काय का केन्द्र-बिंदु भी लखनऊ हो गया था। उनके लखनऊ पहुच जाने से क्रातिकारियो का उत्साह दुगुना बढ गया। लखनऊ से अग्रेजी राज्य का अत हो गया था किंतु अभी भी अग्रेज दो स्थानो को अपने अधिकार मे लिये हुए थे—मच्छी भवन तथा बेलीगारद। मौलवी अहमदशाह ने पहली जुलाई को मच्छी भवन पर आक्रमण किया। बडी भीषण गोलाबारी हुई। अग्रेजो को मच्छी भवन खाली करना पडा लेकिन मच्छी भवन खाली करते समय उन्होने उसे बारूद से उडा दिया तथा बेलीगारद मे शरण ली।

2 जुलाई, 1857 को मौलवी अहमदशाह ने बेलीगारद पर जोरदार आक्रमण किया। लगता था कि वह बेलीगारद पर अपना अधिकार करने मे सफल हो जाएगे। बेलीगारद मे घिरे हुए अग्रेजो को विश्वास होने लगा था कि उनकी पराजय निश्चित है। अग्रेज सेनापति हेनरी लारेन्स गोले मे घायल हो गये और अन्तत उनका घाव प्राणघातक सिद्ध हुआ। दोनो ओर से गोलाबारी होती रही। बेलीगारद से क्रातिकारियो पर निरतर गोले बरसाये जा रहे थे। अत मे क्रातिकारी सेना को पीछे हटना पडा।

मौलवी अहमदशाह स्थान स्थान से लखनऊ आयी हुई क्रातिकारी सेना के नेता थे। इन दिनो नबाव वाजिद अली शाह कलकत्ते मे कैद थे। उनके पुत्र बिरजीस कद्र को लखनऊ का नवाब बनाया गया। इस समय उनकी आयु केवल ग्यारह वर्ष की थी। बेगम हजरत महल ने शासन की बागडोर अपने हाथ म ले ली। मौलवी अहमदशाह के मन मे पद अथवा धन की लिप्सा नहीं थी। महाराज बालकृष्ण को दीवानी का अधिकारी बनाया गया तथा राजा जयपाल सिंह को कलेक्टरी सौपी गयी। मौलवी साहब का उनके चरित्र तथा व्यक्तित्व के कारण क्रातिकारियो की सभा मे विशिष्ट स्थान था।

मौलवी अहमदशाह ने 15 फरवरी, 1858 को जनरल आउट्रम पर आक्रमण किया किंतु विश्वासघात तथा सैनिको की कायरता मौलवी की हार का कारण बनी। राइस होम्स मौलवी अहमदशाह की वीरता को देखकर कह उठे थे—"यद्यपि अधिकाश विद्रोही कायर है,

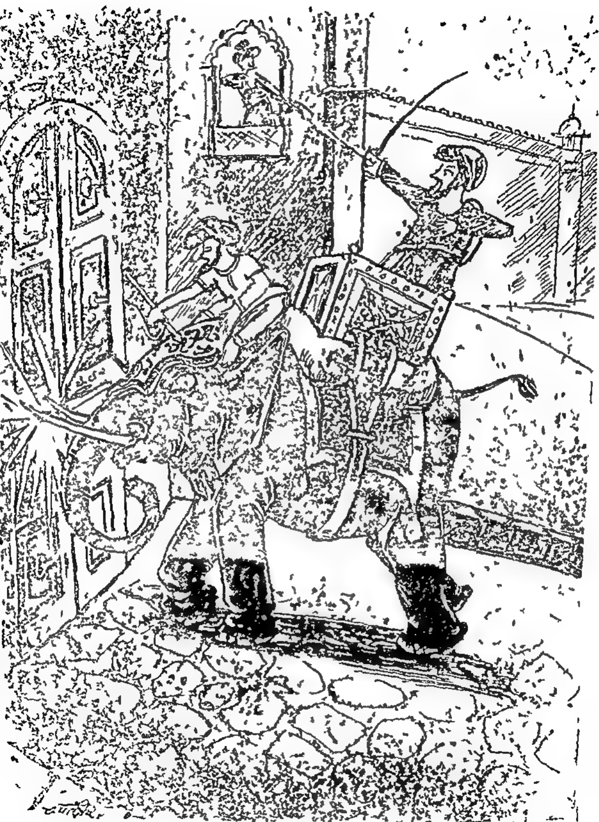
उनके नेता मौलवी अहमदुल्लाशाह वास्तव मे साहस एव शक्ति मे एक बडी सेना का नेतृत्व करने योग्य है। 21 फरवरी, 1858 को मौलवी अहमदशाह ने फिर से आउट्रम पर आक्रमण किया। अग्रेजो ने तुरत भीषण जवाबी गोलाबारी आरभ कर दी। यदि क्रातिकारी गोलाबारी की परवाह किये बिना आगे बढ जाते तो सभव था विजय उनकी होती। क्रातिकारी सेना आगे बढने से हिचकिचायी और उनकी पराजय हुई। मौलवी अहमदशाह ने 25 फरवरी, 1858 को आउट्रम पर तीसरी बार आक्रमण किया और प्रात काल सात बजे आलमबाग पर भीषण गोलाबारी की। दस बजे के लगभग क्रातिकारियो ने शत्रु के बाये ठिकाने पर भारी आक्रमण किया। ऐसा प्रतीत होने लगा था कि विजय क्रातिकारियो के हाथ लगेगी। मालेसन ने लिखा है—"इससे पहले क्रातिकारी कभी भी इतने दृढ निश्चय से नही लडे थे।" अग्रेज-सेना के पास नई कुमुक आ गयी और क्रातिकारियो को पीछे हटना पडा। यदि आलमबाग मे आउट्रम पराजित हो जाते तो सभव है भारत के इतिहास के पृष्ठ ही बदल जाते।

धीरे-धीरे क्रातिकारी सेनाओ मे अव्यवस्था फैलने लगी। 6 मार्च, 1858 को कैम्पबेल ने लखनऊ पर तीन ओर से आक्रमण किया। मौलवी अहमदशाह तथा उनके साथियो ने चप्पे-चप्पे पर अग्रेजो से लोहा लिया। दुर्भाग्यवश अत मे क्रातिकारी सेना पराजित हो गयी और लखनऊ का पतन हो गया।

मौलवी अहमदशाह ने हारकर भी हार नही मानी। मौलवी साहब देश की गौरवशाली प्रतिष्ठा को सम्मानित रखना चाहते थे। उनके पास मुट्ठी-भर सेना थी। अपने थोडे-से साथियो को लेकर उन्होने पुन लखनऊ मे प्रवेश किया। विजयी अग्रेज सेना से सआदतगज मे घमासान युद्ध हुआ। लेकिन मुट्ठी भर सेना अग्रेजो की विशाल सेना के सम्मुख कब तक टिक सकती थी? विजय की सभावना न देखकर वह फिर लखनऊ से निकल गये। अग्रेजो ने उनका छ मील तक पीछा किया परन्तु वे उस वीर सेनानी को पकडने मे असमर्थ रहे।

लखनऊ के पतन के उपरात मौलवी साहब ने बाडी मे अपना डेरा डाला। होप ग्राट बहुत बडी सेना लेकर उन्हे पराजित करने के लिए लखनऊ से निकला। मौलवी ने शत्रु की शक्ति को जानने के लिए कई गुप्तचर भेजे। उन्होने लडाई की सुदर योजना बनायी। उन्होने अपनी सेना दो भागो मे विभक्त कर दी। वे शत्रु पर दो ओर से आक्रमण करना चाहते थे। अग्रेज इतिहासकारो ने उनकी योजना की सुदर शब्दो मे प्रशसा की है परतु उनके साथियो की असावधानी के कारण उनकी योजना शत्रु पर प्रकट हो गयी और वह पुन पराजित हो गये।

बाडी के उपरात मौलवी अहमदशाह शाहजहापुर पहुचे। वहा पर नाना धुधूपत भी आये। दोनो महान क्रातिकारी नेता आगे की योजना के लिए विचार-विमर्श कर रहे थे। कैम्पबेल को यह सूचना मिली तो उन्होने शाहजहापुर को चारो ओर से घेर लिया। दोनो क्रातिकारी नेताओ को बदी बनाने का यह सदर अवसर था किन्तु नाना तथा मौलवी अग्रेजो



अहमदशाह ने महावत को किले के फाटक को तोड़कर अंदर घुस जाने का आदेश दिया ।

की आखो मे धूल झोककर शाहजहापुर से निकल गये । जाते-जाते उन्होने शाहजहापुर के कई भवन जला दिये । अग्रेज सेना को धूप और गर्मी मे पडाव डालना पडा । कई अग्रेज धूप और लू से मर गये ।

कैम्पवेल ने एक मई को शाहजहापुर से बरेली की ओर प्रस्थान किया। अब पूर्व निश्चित योजना के अनुसार मौलवी ने शाहजहापुर पर आक्रमण कर दिया । मौलवी की सेना ने भीषण गोलाबारी की । क्रातिकारी वीरता से लडे परतु अत मे पराजित हो गये । मौलवी अहमदशाह २३ मई को अवध की ओर गये । मौलवी अहमदशाह ने शाहजहापुर मे अपने को भारत का सम्राट घोषित किया था । किंवदति है कि शाहजहापुर मे मौलवी अहमदशाह ने अपने सिक्के भी ढलवाये । कुछ इतिहासकारो का मत है कि मौलवी अहमदशाह ने शाहजहापुर मे अग्रेज सेना को परास्त कर दिया था तथा शहर पर अपना अधिकार कर लिया था। मौलवी साहब ने अग्रेजो की सहायता करने वाले नगरवासियो को प्राणदड दिया । कैम्पबेल ने शाहजहापुर पर पुन आक्रमण किया । बेगम हजरत महल, नाना साहब, शहजादा फिरोज मौलवी साहब की सहायता के लिये अपनी-अपनी सेना लेकर पहुचे । तीन दिन तक घमासान युद्ध होता रहा । अग्रेज मौलवी साहब को पकडने के लिए कृतसकल्प थे । ऐसा प्रतीत होने लगा था कि मौलवी साहब की प्राण-रक्षा असभव है परन्तु वह युद्ध-भूमि से बच निकले।

रुहेलखण्ड होते हुए मौलवी अहमदशाह फिर अवध आए। अवध और रुहेलखड की सीमा पर शाहजहापुर के पास पौवाया का किला है । पाच जून को मौलवी साहब पौवाया पहुचे । मौलवी साहब का विचार था कि अवध मे स्वतन्त्रता सग्राम को पुन आरभ करने मे पौवाया का राजा सहायक हो सकता है । पौवाया के राजा जगन्नाथसिंह ने मौलवी साहब को व्यक्तिगत रूप से मिलने के लिये पौवाया बुलाया । कुछ इतिहासकारो का मत है कि पौवाया के राजा ने एक तहसीलदार और एक थानेदार को शरण दे रखी थी । मौलवी अहमदशाह इस विषय मे बातचीत करने के लिए उनके पास गये । मौलवी साहब वहा पहुचे परन्तु उनके आश्चर्य का ठिकाना नही रहा, जब उन्होने देखा कि किले का फाटक बद था । उन्होने अपने महावत को आज्ञा दी कि हाथी को बढाओ और किले के फाटक को तोडकर अदर घुस जाओ । मौलवी साहब के हाथी ने फाटक पर कई टक्कर मारी । इसी समय राजा जगन्नाथसिंह के भाई ने मौलवी साहब पर गोलियो की बौछार कर दी । इस विश्वासघात एव आक्रमण से मौलवी साहब की प्राण रक्षा नही हो सकी । राजा जगन्नाथसिंह ने मौलवी अहमदशाह का सिर काटकर कपडे मे लपेटकर अग्रेजो को भेंट किया । इस अनुपम भेंट के लिए अग्रेजो ने उन्हे पचास हजार रुपये इनाम मे दिये । मौलवी अहमदशाह के सिर को कोतवाली के सामने टाग दिया ।

पार्थिव शरीर की मृत्यु हो जाती है परन्तु बलिदान अमर होता है । मौलवी साहब मर कर भी आज अमर हैं ।

# अजीमुल्ला खां

"इस स्वतन्तता महायज्ञ मे, कई वीरवर आये काम,
नाना धुधूपत तातिया, चतुर अजीमुल्ला सरनाम,
अहमदशाह मौलवी, ठाकुर कुवर सिंह सैनिक अभिराम,
भारत के इतिहास गगन मे, अमर रहगे जिनके नाम।"

—सुभद्रा कुमारी चौहान

अजीमुल्ला खा का जन्म एक साधारण परिवार मे हुआ था परतु उनकी असाधारण प्रतिभा ने उन्हे विशिष्ट बना दिया। 1837-38 के दुर्भिक्ष मे अजीमुल्ला खा और उनकी मा भूख से मर रहे थे। कुछ समाज-सेवी उन्हे अकाल ग्रस्त क्षेत्र से उठा लाये। उस समय अजीमुल्ला खा की आयु सबसे कम थी। वह दस वर्ष तक मि० पैटन के स्कूल मे पढे। वहा उनकी फीस माफ थी और उन्हे 3 रुपये मासिक छात्रवृत्ति मिलती थी। बाद मे वे इसी स्कूल मे अध्यापक बन गये। अजीमुल्ला खा ने दो-वर्ष तक ब्रिगेडियर स्काट के यहा मुशी का कार्य किया और बाद मे नाना धुधूपत के राजदरबार मे आ गये।

प्रकृति ने अजीमुल्ला खा को सुदर नाक नक्श और शरीर वरदान स्वरूप दिया था। अजीमुल्ला खा ने अपने प्रयत्न से अपने व्यक्तित्व को और भी अधिक आकर्षक बना लिया था।

विक्रमी सवत् 1908 अथवा 26 जनवरी, 1851 को बिठूर के बाजीराव द्वितीय का स्वर्गवास हो गया। नाना धुधूपत उनके दत्तक पुत्र थे। धुधूपत ने अजीमुल्ला खा को अपना दीवान बनाया। बिठूर के कमिश्नर ने नाना साहब को सूचित किया कि उन्हे बाजीराव द्वितीय की धन-सपत्ति उत्तराधिकार स्वरूप मिलेगी परन्तु पेशवा की उपाधि एव व्यक्तिगत सुविधाओ पर उनका कोई अधिकार नही होगा। नाना धुधूपत ने आदेश की कोई चिंता नही की और उन्होने पेशवा महाराज की समस्त उपाधिया ग्रहण कर ली। इस पर अग्रेज प्रशासन ने अविलब उनकी 8 लाख रुपये प्रतिवर्ष की पेंशन बद कर दी। इस परिस्थिति से नाना धुधूपत तथा उनके परिवार के लोग किकर्तव्यविमूढ हो गये। नाना धुधूपत ने लार्ड डलहौजी से कई बार पत्र-व्यवहार किया परन्तु कोई लाभ नही हुआ। अत मे उन्होने अजीमुल्ला खा को अपना वकील बनाकर रानी विक्टोरिया के पास इग्लैड भेजा।

अजीमुल्ला खा 1853 मे इग्लड पहुचे। लदन के समाज मे उनका हार्दिक स्वागत हुआ। वहा के लोगो की दृष्टि मे वह कोई राजकुमार अथवा नवाब लगते थे। अजीमुल्ला खा

के पास हीरे थे, कश्मीरी शाल थे तथा एक आकर्षक व्यक्तित्व था। लंदन की महिलाएं उनके प्रति बहुत आकृष्ट हुईं। बहुत-सी अंग्रेज लडकियां उनसे विवाह करने के लिए व्यग्र हो उठीं। उनको एक दृष्टि भर देख लेने के लिए महिलाओं की भीड लगी रहती थी। वे अज़ीमुल्ला खां को भावभीने पत्र लिखा करती थीं। बिठूर के पतन के उपरांत अंग्रेजों को अज़ीमुल्ला खां के महल में ऐसे प्रेम-पत्रों से भरा हुआ पूरा संदूक मिला। अज़ीमुल्ला खां के अंग्रेज महिलाओं से प्रेम-संबंधों के कारण भारत में अंग्रेज अधिकारी बेहद नाराज थे।

अज़ीमुल्ला खां नाना धुंधूपंत को पेंशन दिलाने में असफल रहे किन्तु वह इंग्लैंड में केवल आमोद प्रमोद में ही व्यस्त नहीं रहे। उन्हीं दिनों सतारा के पदच्युत राजा की ओर से अपील करने के लिए रंगो बापूजी भी इंग्लैंड गये हुए थे। रंगो बापूजी को भी अपने लक्ष्य में सफलता नहीं मिली। लंदन में अज़ीमुल्ला खां और रंगो बापूजी की भेंट हुई। अज़ीमुल्ला खां और रंगो बापूजी के धर्म व जाति भिन्न-भिन्न होते हुए भी उनके सम्मुख एक ही लक्ष्य था। पं० सुंदरलाल के अनुसार—'इसमें संदेह नहीं कि रंगो बापूजी और अज़ीमुल्ला खां ने लंदन के कमरों में बैठकर बहुत दर्जे तक इस राष्ट्रीय योजना को रंग और रूप दिया।' रंगो बापूजी दक्षिण भारत के नरेशों को इस राष्ट्रीय योजना के पक्ष में करने के लिए भारत आ गये किन्तु अज़ीमुल्ला खां यूरोप से सीधे अपने देश लौटकर नहीं आये। अंग्रेजों के बल और स्थिति को समझने के लिए तथा भारत के लिए भावी स्वतंत्रता संग्राम में दूसरे देशों की सहायता प्राप्त करने के लिए विभिन्न देशों का भ्रमण करने लगे।

उन दिनों रूस और इंग्लैंड में युद्ध चल रहा था। अज़ीमुल्ला खां ने सुन रखा था कि रूस ने अंग्रेज और फ्रांस संयुक्त सेना के विरुद्ध माल्टा में विजय प्राप्त की है। अज़ीमुल्ला खां ऐसे वीर सेनानियों को देखने के लिए उत्सुक थे जो अंग्रेजों पर विजय प्राप्त करने में समर्थ हुए थे। कुछ इतिहासकारों का यह भी मत है कि अज़ीमुल्ला खां नाना साहब की ओर से अंग्रेजों के विरुद्ध रूस से संधि करना चाहते थे। इसी लिए वह क्रीमिया युद्ध स्थल तक गये थे। क्रीमिया युद्ध के मोर्चे तक पहुंचने में अज़ीमुल्ला खां की डब्ल्यू० एच० रसल ने बड़ी सहायता की थी। रसल उन दिनों दैनिक टाइम्स के विशेष संवाददाता थे। अज़ीमुल्ला खां ने यह युद्ध डब्ल्यू० एच० रसल के साथ बहुत निकटता से देखा। एक दिन एक गोला ठीक अज़ीमुल्ला खां के पैर के निकट आकर गिरा परन्तु वह अविचलित बने रहे। रसल, अज़ीमुल्ला खां के क्रीमिया युद्ध में जाने को देख कर बहुत अधिक प्रभावित हुए। अज़ीमुल्ला खां ने इस युद्ध से यह जान लिया था कि अंग्रेज अजेय नहीं हैं। इसी भावना ने उन्हें 1857 की क्रांति के लिए प्रेरित किया।

क्रीमिया-युद्ध क्षेत्र के उपरांत अज़ीमुल्ला खां ने इटली, रूस, टर्की तथा मिस्र की यात्रा की। इस यात्रा के दौरान उन्होंने इन देशों की सहानुभूति भारत के स्वतंत्रता संग्राम की ओर प्राप्त करने का प्रयास किया। यह कहना कठिन है कि अज़ीमुल्ला खां को अपने ध्येय में कहां



अज़ीमुल्ला खा विठूर पहुचकर धुधूपत से आगे की योजना के लिए विचार-विमर्श करने लगे।

तक सफलता मिली। परन्तु यह बात नि सदेह है कि क्राति के दिनो मे भारतवासियो मे यह आम विश्वास था कि नाना साहब ने अग्रेजो के विरुद्ध रूस से सधि की है तथा रूसी सेना भारत की सहायता के लिए तुरन्त आने वाली है। क्राति के दिनो मे इटली के प्रसिद्ध सेनापति गैरीवाल्डी अग्रेजो के विरुद्ध भारतवासियो की सहायता के लिए अपनी सेना भेजने की तैयारी कर रहे थे। इटली की आतरिक कठिनाइयो के कारण वे शीघ्र ही भारत की ओर प्रस्थान नही कर सके और जब तक उन्होने भारत आने की तैयारी की, क्राति समाप्त हो चुकी थी।

अज़ीमुल्ला खा यूरोप और एशिया का भ्रमण करने के उपरात भारतवर्ष लौट आये। वह नाना धुधूपत के पास बिठूर पहुचे और यही पर 1857 की क्राति की योजना तैयार की गई। क्राति के लिए विशाल और गुप्त सगठन की आवश्यक्ता थी। क्राति की योजना बनाने मे अजीमुल्ला खा नाना धुधूपत के विशेष सलाहकार थे। 1856 मे नाना साहब ने अपने बहुत से विशेष दूत, दिल्ली से लेकर मैसूर तक, क्राति की ज्वाला प्रदीप्त करने के लिए भेजे। मैसूर की ओर जाते हुए ऐसे ही एक दूत को अग्रेजो ने पकड लिया। अब उन्हे पता चला कि ऐसे ही दूत देश भर मे आ जा रहे हैं और आश्चयजनक ढग से यह गुप्त षड्यन्त्र चलाया जा रहा था।

अज़ीमुल्ला खा और नाना साहब ने क्राति के गुप्त सगठन को एक सूत्र मे बाधने के लिए देशभर मे भ्रमण किया। सबसे पहले ये लोग दिल्ली पहुचे तथा वहा पर बहादुरशाह जफर, मलिका जीनत महल तथा अन्य स्थानीय नेताओ के साथ गुप्त मत्रणाए की। वहा से ये लोग अबाला पहुचे। फिर कई स्थानो पर रुकते हुए ये लोग लखनऊ पहुचे। वहा से अज़ीमुल्ला खा और नाना साहब कालपी होते हुए बिठूर लौट आये। अज़ीमुल्ला खा ने अपनी डायरी मे लिखा है कि हम लोगो ने तीर्थयात्रियो के भेष मे यात्रा की तथा वह इलाहाबाद, गया, जनकपुर, पारसनाथ, जगन्नाथपुरी, पचवटी, रामेश्वर, द्वारका, नासिक, आबू, उज्जैन, मथुरा, बद्रीनाथ और कामरूप तक गये। अग्रेज इतिहासकारो ने इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया है कि एक हिन्दू और एक मुसलमान तीर्थयात्रा पर साथ-साथ कैसे निकल पडे। क्राति की योजना को सफल बनाने के लिए अज़ीमुल्ला खा और नाना साहब रास्ते की सब अग्रेज छावनियो मे भी गये।

कानपुर मे क्राति का आरभ 4 जून की रात्रि को दो बजे हुआ। क्रातिकारी सिपाहियो ने अग्रेजो के बगलो मे आग लगा दी तथा खजाने और बारूदखाने पर अधिकार कर लिया। इसके उपरात क्रातिकारी सेना कानपुर से तीन-चार मील दूर कल्याणपुर मे विचार-विमर्श के लिए एकत्रित हुई। अज़ीमुल्ला खा, नाना साहब तथा बाला साहब भी कानपुर से कल्याणपुर पहुच गये। कहा जाता है कि कानपुर की क्रातिकारी सेना दिल्ली जाने के लिए उत्सुक थी और नाना साहब भी उनके साथ दिल्ली जाने को तैयार थे किंतु अजीमुल्ला खा ने नाना साहब को परामर्श दिया कि दिल्ली जाने के स्थान पर कानपुर जाना अधिक उपयुक्त रहेगा।

क्योंकि कानपुर मे वे स्वतत्र रूप से क्राति का सचालन कर सकते हैं परन्तु दिल्ली मे उन्हे अन्य क्रातिकारी नेताओ के अतगत काय करना पडेगा। नाना साहब अजीमुल्ला खा का परामश मानकर वापस कानपुर लौट आये।

कानपुर का प्रशासन अपने हाथ मे लेने के उपरात नाना साहब ने वहा पर कानून व व्यवस्था स्थापित करने का पूरा प्रयास किया।

कहा जाता है कि एक महिला अग्रेजो के पास पत्र लेकर पहुची। पत्र अजीमुल्ला खा का लिखा हुआ था परतु उस पर उनके हस्ताक्षर नही थे। पत्र म लिखा हुआ था—"जो लोग डलहौजी की नीति से सबधित नही हैं तथा आत्म-समपण करना चाहते ह, उन्हे निर्विघ्न इलाहाबाद पहुचा दिया जायेगा। अग्रेजों के पास इस प्रस्ताव को स्वीकार करने के अतिरिक्त और कोई चारा नही था। ऐसी परिस्थिति मे अजीमुल्ला खा और ज्वाला प्रसाद अग्रेजो से वार्तालाप करने उनके शिविर मे पहुचे। दोनो ओर के प्रतिनिधियो की बैठक हुई। वार्तालाप के उपरात निम्नलिखित शर्ते निश्चित हुई

(1) अग्रेज अपने शस्त्र नाना साहब को समर्पित कर देंगे। प्रत्येक व्यक्ति अपने साथ एक बदूक तथा 60 गोलिया ले जा सकेगा।

(2) स्त्रियो, बच्चा तथा घायलो के लिए वाहन का प्रबध किया जायेगा।

(3) घाट पर नावो का प्रबध होगा। नावो मे खाद्य-सामग्री भी होगी।

अजीमुल्ला खा ने ये सब शर्तें स्वीकार कर ली और शर्तो के अनुसार अग्रेज नावो पर सवार हो गये। सयोगवश घाट पर उपस्थित जन-समूह मे इलाहाबाद से आये हुए छठी पलटन के कुछ ऐसे सैनिक भी थे जिन्होने जनरल नील के अमानुषिक अत्याचारो को अपनी आखो से देखा था। जनरल नील ने वहा के अनेक गावो को जलाकर राख कर दिया था, सैकडो निर्दोष लोगो को गोलियो से भून डाला था। पेडो पर कितने ही लोगो को फासी लगाकर लटका दिया गया था और उनकी लाशें टगी रहने दी गई थी। अग्रेजो को देखकर उनके हृदय म रोष तथा प्रतिहिंसा की ज्वाला भडक उठी और उन्होने इस अवसर का लाभ उठाकर अचानक गोलाबारी शुरू कर दी जिसके परिणाम स्वरूप नावो पर सवार अनेक अग्रेज वही मर गये। इतिहासकार सुरेन्द्रनाथ सेन ने लिखा है कि इस घटना के मूल मे लोगो का जनरल नील की नृशसता के प्रति आक्रोश था।

धीरे-धीरे क्राति ने दूसरा मोड लिया। 17 जुलाई, 1857 को अग्रेजो की सेना कानपुर पहुच गई। स्थान-स्थान पर अग्रेजो और क्रातिकारियो की सेनाओ मे युद्ध हुए। शनै शनै क्रातिकारियो की शक्ति क्षीण होती चली गई। अग्रेजो ने कई स्थानो पर पुन अधिकार स्थापित कर लिया। अत मे क्रातिकारी पराजित हुए। नाना साहब कानपुर छोडकर कहो और चले गये। अग्रेजो ने विद्रोह करने वालो की एक सूची निकाली। इस सूची मे अजीमुल्ला

खा का नाम भी सम्मिलित था। क्राति की असफलता के उपरात बहुत से क्रातिकारी नेपाल की तराई की ओर चले गये। अजीमुल्ला खा भी उनमे से एक थे। वहा पर उन्हे भयकर कठिनाइयो का सामना करना पडा। नेपाल के राणा जगबहादुर ने क्रातिकारियो की कोई सहायता नहीं की बल्कि वह सदैव उनके विरुद्ध ही रहे। कठोर परिस्थितियो से सघष करते-करते अक्तूबर के महीने मे भुटवल नामक स्थान पर अजीमुल्ला खा की मृत्यु हो गई।

अज़ीमुल्ला खा 1857 की जनक्राति के 'मस्तिष्क' थे। 1857 की इस क्राति से भारतीय स्वतनता सग्राम का शुभारभ हुआ। इस प्रकार अजीमुल्ला खा ने हमारे सग्राम की प्रारभिक ईंट रखी।

# राणा बेनी माधो सिंह

अवध मे राणा भयो मरदाना।
पहली लडाई भई वक्सर मा,
सिमरो के मैंदाना,
हुवा से जाय पुरवा मा जीत्यो,
तबै लाट घबराना। अवध मे
भाई, बधु औ कुटुव कबीला,
सबका करौ सलामा,
तुम तो जाय मिल्यो गोरन ते
हमका है भगवना। अवध मे
हाथ मे माला, बगल सिरोही
घोडा चले मस्ताना। अवध मे

—एक लोकगीत का अश

बैसवाडा के लोकगीतो मे आज भी 1857 की क्राति के वीर योद्धा बेनी माधो सिंह की स्मृति अमिट है। उक्त लोकगीत इस बात का द्योतक है कि जनमानस पर बेनी माधो सिंह अपने शौर्य तथा व्यक्तित्व की कितनी अमिट छाप छोड गये हैं।

राणा बेनी माधो सिंह किसी प्रलोभन के सम्मुख कभी नही झुके। वह जीवन के अतिम क्षण तक अग्रेजो के विरुद्ध लडते रहे और अत मे लडाई के मैदान मे ही वीरगति को प्राप्त हुए। अग्रेज उन्हे अवध के ताल्लुकेदारो मे 'सबसे शक्तिशाली' समझते थे।

बेनी माधो सिंह के पूर्वजो का इतिहास बहुत प्राचीन है। वह इतिहास के प्रारभिक काल के बैस नायक शालिवाहन से सबधित थे। शकरगढ के ताल्लुकेदार नि सतान थे इसलिए बेनी माधो सिंह को गोद ले लिया था। क्राति के समय बेनी माधो सिंह काफी वृद्ध थे तथा राजपूतो की बैसवाडा जाति के नायक समझे जाते थे। उनके अधीन चार गढ थे।

बेनी माधो सिंह का अपनी प्रजा के प्रति व्यवहार पितावत था। प्रजा सतुष्ट और समृद्ध थी। लखनऊ के दरबार मे उनका प्रभाव था। नवाब वाजिद अली शाह ने उन्हे नाजिम बनाया था तथा 'दिलेरजग' की पदवी प्रदान की थी। वह शकरगढ के किले मे रहते थे जिसके चारो ओर घना जगल था। वह दुर्गा मा के भक्त थे और उनका दिन 'दुर्गा-पूजा' से प्रारभ होता था।

जिस समय बेनी माधो सिंह की ख्याति अपनी चरम-सीमा पर थी, अंग्रेजो ने अपनी नई शासन-नीति के अनुसार, उनसे 116 गाव छीन लिए। इस बात से बेनी माधो सिंह को गहरा धक्का लगा तथा उनका मन अंग्रेजो के प्रति आक्रोश से भर उठा। क्राति के आरभ से ही वह उसमे उत्साह के साथ सम्मिलित हो गये।

मई 1858 के आसपास बेनी माधो सिंह की सेना लखनऊ के निकट बनी के पास एकत्रित थी। बेगम हजरत महल ने उन्हे आलमबाग के युद्ध मे भाग लेने के लिए आमत्रित किया था। हजरत महल ने समस्त जमीदारो को अंग्रेजो के विरुद्ध लडने के लिए आह्वान किया था तथा घोषणा की थी कि जो लोग राणा बेनी माधो सिंह की सहायता करेंगे तथा अपने 1,000 सैनिको मे से 50 सैनिक भेज देंगे, उनका पाच वर्ष का आधा राज्य कर माफ कर दिया जाएगा।

राणा बेनी माधो सिंह अंग्रेजो का समूल नाश करने के लिए कृतसकल्प थे। मई-जून 1858 मे उन्होने अंग्रेजो को बहराइच से निकाल दिया। उन्होने लखनऊ मे अंग्रेजो के विरुद्ध कई लडाइयो मे भाग लिया। उन्होने बेनीगारद के युद्ध मे क्रातिकारियो की सहायता की और वहा अपने 1,000 सवार भेजे। वह ग्राड ट्रक रोड पर भी छापे मारा करते थे। बेनी माधो सिंह छापामार युद्ध मे विश्वास रखते थे। इस युद्ध पद्धति से उन्होने अंग्रेजो को नाको चने चबवा दिये थे। कैनेना के अनुसार बेनी माधो सिंह का उपहास करते हुए अंग्रेजो ने उन दिनो एक गाना बना रखा था जिसका भावार्थ इस प्रकार था

"बेनी माधो, बेनी माधो
तुम सारे दिन कहा थे ?
मैं आपको रास्ते से हटाने का प्रयत्न कर रहा था,
बहुत बुरी बात ! बहुत बुरी बात !
बेनी माधो, बेनी माधो
अंग्रेजो से क्यो घबराते हो
क्योकि उन्हे पराजित करना मेरा प्रारब्ध नही,
ओह ! दुख की बात ! बहुत दुख की बात।"

कविता मे राणा बेनी माधो सिंह का मजाक उडाया गया है। परतु यह इस बात का प्रतीक है कि राणा अंग्रेजो के मन-मस्तिष्क पर छाये हुए थे।

लखनऊ के पतन के उपरात भी बेनी माधो सिंह ने पराजय स्वीकार नही की। उन्होने दुगुने उत्साह के साथ क्राति का सचालन अपने हाथ मे ले लिया। लखनऊ के पतन के उपरात भी प्रदेश के चौथाई भाग ने अपने हथियार नही डाले थे। अंग्रेज जहा भी अपने राजस्व अधिकारी अथवा अन्य अधिकारी नियुक्त करते थे, बेनी माधो सिंह के साथी उन्हे तुरत मार



राणा बेनी माधो सिंह किसी प्रकार से हथियार डालने को तैयार नहीं थे।

डालते थे। फिरगी समझ गये थे कि बेनी माधो सिंह के जीवित रहते अवध मे शाति स्थापित होना असभव है। 5 नवबर को अग्रेज सेनापति ने बेनी माधो सिंह के पास निम्न आशय का एक पत्र भेजा

" इग्लैंड की साम्राज्ञी का घोषणा पत्र राणा बेनी माधो सिंह को भेजा जाता है। राणा को यह सूचित किया जाता है कि उस घोषणा-पत्र की शर्तों के अनुसार उनका जीवन आज्ञाकारिता पर्दाशित करने पर ही सुरक्षित है। गवनर जनरल का विचार कठोर व्यवहार करने का नही है। परतु बेनी माधो सिंह को यह विदित होना चाहिए कि वह दीघ समय से सशस्त्र विद्रोह कर रहे ह और कुछ समय पूव ही उन्होने अग्रेजो की सेनाओ पर आक्रमण किया है। अतएव उन्हे अपने किलो तथा तोपो को पूण रूप से समर्पित कर देना चाहिए और अपने सिपाहियो तथा सशस्त्र अनुयायियो को लेकर अग्रेज सैनिको के सम्मुख शस्त्र अर्पित कर देने चाहिए। तदुपरात ही सिपाही तथा उनके सशस्त्र अनुयायी बिना दड या हानि के घर जा सकेंगे। "

कैम्पबेल की सेनाए शकरपुर के जगल से तीन मील दूर केशोपुर में रुकी हुई थी। राणा बेनी माधो सिंह पर तीन ओर से आक्रमण करने की योजना बनायी गयी थी। कैम्पबेल का शिविर शकरपुर के पूर्वी ओर था। होपगाट की सेना उसके दाहिनी ओर तीन मील की दूरी पर थी। पश्चिम दिशा मे सिमरी की ओर से ब्रिगेडियर इवले की सेनाए बढ रही थी। अग्रेज सेना-अधिकारी राजा के उत्तर की निरन्तर प्रतीक्षा कर रह थे। 15 नवबर को सेनापति के पास राणा बेनी माधो सिंह के पुत्र का पत्र आया—"मैने आपका पत्र तथा घोषणा पत्र प्राप्त कर लिया है। यदि अग्रेज सरकार मेरे साथ भूमि का बदोबस्त करेगी तो मैं अपने पिता बेनी माधो सिंह को निकाल दूगा। वह बिरजिस कद्र के साथ है और म ब्रिटिश सरकार का भक्त हू। मैं अपने पिता के कारण नष्ट नही होना चाहता।" किन्तु लगभग उसी समय अग्रेज सेनापति को राणा बेनी माधो सिंह का दृढ उत्तर मिला—"मैं किसी प्रकार से हथियार डालने को तैयार नही। मैने बिरजिस कद्र की अधीनता स्वीकार की है और में जीते जी विश्वासघात नही करूगा।" राणा बेनी माधो सिंह तथा उनके पुत्र के पत्रो मे परस्पर विरोधाभास था। सभवत क्रातिकारी नेता अग्रेजो को उलझन मे रखना चाहते थे। इस प्रकार के विरोधी पत्रो के कारण अग्रेजो का किसी भी निणय पर पहुच पाना कठिन था। जो दूत राणा के पास पत्र लेकर गया था उसने सूचना दी कि उस समय राणा बेनी माधो सिंह के पास 4,000 सैनिक, 2,000 घोडे तथा 40 तोपें थी। अग्रेज अधिकारी इस सूचना को पाकर सतर्कता से युद्ध की तैयारी मे लग गये। उन्हे भय था कि कही राणा ही उन पर अनायास आक्रमण न कर दे। लेकिन राणा बेनी माधो सिंह जानते थे कि अग्रेजो की विशाल सैन्यशक्ति के सम्मुख उनका टिकना असभव है। नवम्बर की 16 तारीख को रात्रि के समय उन्होंने अपना किला खाली कर दिया तथा अपने साथ तोपें भी लेकर वहा से गायब हो गये। अग्रेज अधि-

कारियो को सूचना मिली कि राणा बेनी माधो सिंह रायबरेली की ओर बढ गये है। ब्रिगेडियर इवले ने राणा का पीछा किया। राणा बेनी माधो सिंह और आगे बढे तथा डोडिया खेडा पहुच गये। वहा बाबू रामबख्श सिंह का गढ था। बाबू रामबख्श सिंह अंग्रेजो के विरुद्ध थे तथा उनके किले को अंग्रेजो ने काफी नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था। राणा बेनी माधो सिंह बाबू रामबख्श सिंह के गाव मे पहुचे। ब्रिगेडियर इवले भी डोडिया खेडा पहुचे। लार्ड क्लाइव की सेना भी डोडिया खेडा पहुच गयी थी। राणा बेनी माधो सिंह के पास इस समय भी साढे सात हजार सैनिक तथा सवार थे तथा उन्होने आठ तोपें डोडिया खेडा के किले पर लगा रखी थी। इस समस्त क्षेत्र मे घना जगल था। राणा बेनी माधो सिंह ने सुरक्षा के लिए जगल के आगे एक खाई खोदी थी। अंग्रेजो ने एक बार फिर राणा बेनी माधो सिंह से समझौता करने का प्रयास किया परतु राणा ने साफ इकार कर दिया। 24 नवबर को अंग्रेजो की सेना घने जगल से होती हुई किले की तरफ बढी। राणा बेनी माधो सिंह के सैनिक उन पर भयकर गोलाबारी कर रहे थे। घमासान युद्ध हुआ। राणा बेनी माधो सिंह की सेना की पराजय हुई। बेनी माधो ने किसी तरह बचकर गगा को पार किया और अवध को सदा के लिए छोड दिया।

बैसवाडा पर अंग्रेजो का अधिकार हो गया था। अंग्रेजो को सूचना मिली कि राणा बेनी माधो सिंह वितौली के किले मे विद्यमान है। वह उनका पीछा करते हुए वहा भी पहुचे परतु राणा यहा से भी बच निकले। अंग्रेज सेनापति कैम्पबेल को जब सूचना मिली कि राणा बेनी माधो सिंह नाना साहब की सेना के साथ नानपारा के उत्तर मे 20 मी। पर बकी नामक स्थान पर उपस्थित है तो उसने आगे बढकर राणा की सेना पर हमला किया। दोनो सेनाओ मे एक बार फिर युद्ध हुआ। वहा से एक सडक राप्ती की ओर जाती थी तथा दूसरी नेपाल मे सुनर-घाटी की ओर। पराजित होकर राणा अपनी सेना सहित नेपाल की ओर निकल गये तथा वहा बेगम हजरत महल तथा अन्य क्रातिकारियो से मिल गये। राणा बेनी माधो सिंह ने देश और बेगम हजरत महल के लिये अपना घर सदा-सर्वदा के लिए छोड दिया।

नेपाल मे राणा बेनी माधो सिंह को भयकर कठिनाइयो का सामना करना पडा। वह नेपाल के भुटवल, नयाकोट, चितवन आदि स्थानो पर भटकते रहे। कभी कभी सिपाहियो को खाद्य सामग्री खरीदने के लिए अपने हथियार तक बेचने पडते थे। नेपाल के राणा जग बहादुर ने क्रातिकारियो की सहायता तो की ही नही बल्कि राणा बेनी माधो सिंह के विरुद्ध अपनी सेना भेजी। लडाई मे राणा बेनी माधो सिंह मारे गये और इस तरह एक महान देशभक्त का अत हो गया।

# गौंड राजा शंकरशाह

भारतीय इतिहास के विस्मृत पृष्ठो मे राजा शकरशाह का नाम जगमगाते हुए नक्षत्र की भाति है। उन्हे 1857 की क्राति के अमर शहीदो की अग्रिम पक्ति मे स्थान दिया जाना चाहिए।

राजा शकरशाह गढमडल के विख्यात गौड राज-परिवार के वशज थे, जिसका सबध 16वी सदी की वीरागना रानी दुर्गावती से भी था। वह जबलपुर के नगराचल मे पुरवा नामक स्थान मे रहते थे। क्राति के समय वह वयोवृद्ध व्यक्ति थे तथा उनकी दाढी बफ की भाति सफेद थी। राजा शकरशाह को अपनी वश-परम्पराओ पर अभिमान था। यह राज्य किसी समय बहुत विस्तृत और शक्तिशाली था परतु बाद मे इसे मराठो ने पराजित कर दिया था। क्राति के समय राजा शकरशाह निर्धनता का जीवन व्यतीत करने पर विवश थे। उन्हे अग्रेज राज्य द्वारा पेंशन मिलती थी। राजा शकरशाह के पास उस समय न तो राज्य था और न ही धन वैभव, फिर भी उस क्षेत्र के जन-साधारण पर उनका गहरा प्रभाव था। अग्रेज शासन उनसे मैत्री स्थापित करना चाहता था। इसमे उनका अपना ही स्वार्थ निहित था। वह उस क्षेत्र मे शाति बनाये रखना चाहते थे तथा अपनी दक्षिणी सीमाओ को सुरक्षित रखना चाहते थे। राजा शकरशाह को अग्रेजो की मैत्री से लौकिक अर्थों मे आर्थिक लाभ हो सकता था परतु उन्होने उस लाभ की परवाह न करते हुए स्वतत्रता सग्राम मे सम्मिलित होना अधिक श्रेयस्कर समझा।

1857 मे समस्त राष्ट्र मे क्राति का शखनाद बज उठा था। जबलपुर तथा निकटवर्ती स्थानो मे भी स्थिति सामान्य नही थी। मुहरम के निकट अग्रेज अधिकारियो को जबलपुर के कुछ विशिष्ट व्यक्तियो का व्यवहार सदिग्ध लगा था। राजा शकरशाह, उनके पुत्र रघुनाथ शाह, कुछ जमीदार एव उनके कुछ साथी, 52वी पलटन के साथ मिल कर अग्रेजो पर, मुहरम के अतिम दिन आक्रमण करना चाहते थे। क्रातिकारी राजा एव उनके साथी मुहर्रम के दिन अपनी इस योजना को कार्यान्वित नही कर सके। इसके दो प्रमुख कारण थे। एक तो यह कि वे जानने मे असमर्थ रहे कि कितने सिपाही क्राति मे उनका साथ देंगे और दूसरे दो क्रान्तिकारी सैनिक जमीदारो ने अतिम समय पर उनका साथ देना अस्वीकार कर दिया। अब क्रान्तिकारी गौड राजा एव उनके साथियो ने दशहरे के आसपास अग्रेजो पर पुन आक्रमण करने का निश्चय किया। लैफ्टिनेंट क्लार्क को यह सूचना मिली। उन्होंने अपने



ने फांसी लगाने की अपेक्षा क्रान्तिकारियों को तोप से उड़ा देना अधिक श्रेयस्कर समझा।

चपरासी को, फकीर के वेश मे, अधिकृत सूचना प्राप्त करने के लिए राजा के पास भेजा। राजा शकरशाह धोखे मे आ गये और उन्होने फकीर वेशधारी गुप्तचर के सम्मुख अपनी समस्त गुप्त योजना रख दी। चपरासी के द्वारा षड्यत्र की निश्चित सूचना मिल जाने पर क्लाक ने बीस सवारो तथा कुछ सिपाहियो के साथ राजा शकरशाह के गाव को घेर लिया। राजा शकरशाह, उनके पुत्र तथा परिवार के अन्य तेरह सदस्यो को बिना किसी कठिनाई के 14 सितम्बर, 1857 को बदी बना लिया गया।

अग्रेजो ने गोंड राजा शकरशाह के घर की पूरी तरह से तलाशी ली। उनके पास कुछ कागज-पत्र मिले जिनका सीधा सबध क्राति से था।

राजा शकरशाह एव उनके परिवार के सदस्यो को बदी बनाने के दूसरे दिन लैफ्टिनैंट क्लाक को सूचना मिली कि कुछ सिपाही उन्हे कारागृह से मुक्त कराना चाहते है। इस बात को रोकने के लिए मद्रास की पलटन हथियार लिये हुए समस्त रात्रि पहरा देती रही। राजा शकरशाह एव उनके साथियो को कारागृह के स्थान पर रेजीडेंसी म रखा गया जहा से उन्हे मुक्त कराना और भी कठिन था। रात्रि के समय कुछ गोलियो की आवाज सुनायी दी। 52वी पलटन के कुछ सैनिक हथियार लेकर वहा से गायब हो गये। 52वी पलटन मे हलचल थी तथा अग्रेज अधिकारी भयत्रस्त थे।

अगले दिन सैनिक न्यायालय मे राजा शकरशाह एव उनके पुत्र के विरुद्ध मुकदमा चलाया गया। यह बात निर्विवाद सिद्ध हो गयी कि उन दोनो का अग्रेजो के विनाश के षड्यत्र मे पूरा-पूरा हाथ था। न्यायालय ने पिता और पुत्र को तोप से उडा देने की सजा दी। न्यायालय ने फासी लगाने के स्थान पर बदियो को तोप से उडा देना अधिक श्रेयस्कर समझा क्योकि उन्हें हर समय यह भय था कि कही क्रातिकारी बदियो को कारागृह से मुक्त न करा लें। 52वी पलटन मे उत्तेजना थी और अग्रेज अधिकारी किसी प्रकार की विपदा मोल नही लेना चाहते थे। 18 सितम्बर को प्रात ग्यारह बजे पिता और पुत्र को तोपो के सम्मुख लाकर खडा कर दिया गया। चारो ओर सैनिक पहरा था। वयोवृद्ध राजा शकरशाह बिल्कुल तन कर तोप के मुख तक पहुच गये। अतिम क्षणो मे भी उनके मुख पर क्रुद्ध भाव था पर किसी प्रकार की घबराहट नही थी। उनकी सफेद दाढी और सम्मान योग्य व्यक्तित्व को देख कर उनके शत्रुओ के हृदय मे भी उनके प्रति सवेदना उत्पन्न हो रही थी। कुछ क्षणो मे तैयारी पूरी हो गयी। तोप दागने का सकेत दिया गया। एक क्षण पहले जो व्यक्ति जीवित खडे थे, उनकी लाशे अब टुकडे-टुकडे होकर इधर-उधर बिखर गयी। रेजीडेंसी की भूमि देशप्रेमियो के रक्त से नहा उठी। गिद्ध और चील लाशो पर झपट पडे। पिता और पुत्र के पार्थिव शरीर के जो भी अवशेष मिल सके वह गोंड रानी को सौप दिये गये। जिस समय पिता और पुत्र को तोप से उडाया गया, उस समय वहा पर बाम्बे प्रेसिडेंसी के चिकित्सा अधिकारी उपस्थित थे।

राजा शंकरशाह और उनके पुत्र का बलिदान व्यर्थ नहीं गया। जबलपुर की 52वीं देसी पलटन विद्रोह में सदैव उनके साथ थी। जब वयोवृद्ध गोंड राजा शंकरशाह और उनके पुत्र को तोप से उड़ा दिया गया तो 52वीं पलटन के सैनिक उत्तेजित हो उठे। उन्होंने अंग्रेज सेनाधिकारी ग्रैगोर को मार डाला। वे जबलपुर छोड़कर देश के अन्य भागों में क्रांति में भाग लेने के लिए निकल पड़े। क्रांति की एक छोटी-सी चिंगारी लपटें बन कर समस्त देश में फैल गयी थी।

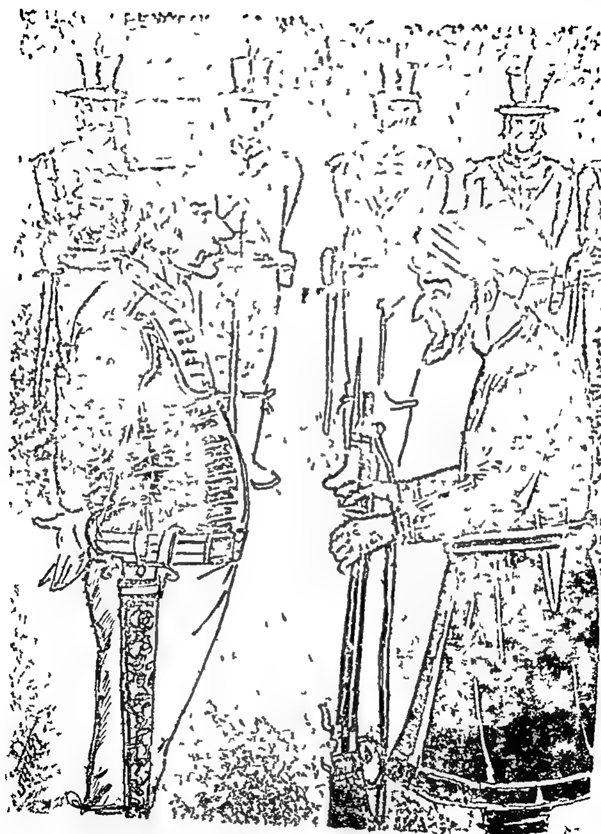
# नवाब तफज्जुल हुसैन

नवाब तफज्जुल हुसैन के शौर्य एव वीरता की कहानी भारतीय इतिहास का स्वर्णिम पृष्ठ है। अग्रेज उन्हें भयकर अपराधी मानते थे तथा उन्ह पकडने के लिए इनाम घोषित कर रखा था। नवाब ने अग्रेजो के विरुद्ध जो कुछ भी किया उसके लिए उन्हे कभी पश्चाताप नही हुआ। वह अतिम क्षणो मे भी आस्था और विश्वास के साथ अडिग खडे रहे।

फरुखाबाद दोआब के छोटे से प्रान्त की राजधानी थी। गगा नदी यहा पास ही बहती थी तथा यह नगर दिल्ली से 185 मील दक्षिण-पूर्व मे स्थित था। नगर के चारो ओर एक पक्की दीवार थी तथा उस समय यह नगर व्यापार का प्रमुख केन्द्र था। फर्रुखाबाद के पास ही फतहगढ (विजय का किला) अग्रेजो की छावनी थी। यहा की जनसख्या लगभग 60,000 थी। 1857 मे समस्त देश मे क्रान्ति का बिगुल बज उठा। फतहगढ इस लहर से अछूता कैसे रह सकता था? ठाकुर जमीदारो मे असन्तोष था, पठान अशात थे तथा फरुखाबाद के नवाब के हृदय मे आक्रोश था। मई के मध्य तक समस्त प्रान्त मे क्राति की ज्वाला धधक उठी। फतहगढ मे रहने वाले अग्रेज भय-त्रस्त थे। फतहगढ मे कर्नल स्मिथ के अतर्गत 10वी पलटन नियुक्त थी। कर्नल स्मिथ को भय था कि दसवी पलटन किसी भी समय उनके विरुद्ध हो सकती है। उन्होंने 4 जून को स्त्रियो तथा बच्चो को नाव मे बैठाकर फतहगढ से बाहर कानपुर की ओर भेज दिया। 10वी पलटन के सैनिको को यह सूचना मिली कि 41वी पलटन के सैनिक बदीगृह से बहुत से छूटे हुए कैदियो तथा सैन्य सामग्री के साथ गगा नदी के तट पर जा पहुचे हैं। 10वी पलटन ने तुरत विद्रोह का झडा खडा कर दिया। वे उत्तेजित अवस्था मे शोर मचाते हुए नदी के तट पर पहुचे और क्रातिकारियो का स्वागत किया। उन्होंने कर्नल स्मिथ की आज्ञाओ का पालन करने से इन्कार कर दिया। कर्नल स्मिथ तथा उसके साथी निरुपाय होकर फतहगढ के किले मे चले गये।

अब 10वी तथा 41वी पलटन के सैनिक फरुखाबाद पहुचे। उन्होने फरुखाबाद के नवाब तफज्जुल हुसैन को गद्दी पर बैठा दिया। नवाब तफज्जुल हुसैन को 21 तोपो की सलामी दी गई तथा उन्हें शासक घोषित कर दिया गया।

नवाब तफज्जुल हुसैन ने राज्य की बागडोर सभालते ही आसपास के जिले के लोगो को बिजली के प्रेषण के तारो को काटने का आदेश दिया। समस्त अग्रेजो तथा ईसाइयो की सपत्ति को नष्ट कर दिया गया। फतहगढ के निकट हुसैनपुर के ग्रामवासियो ने इस काय मे नवाब की बहुत सहायता की। नवाब तफज्जुल हुसैन को अग्रेजो से गहरी नफरत थी।



नवाब तफज्जुल हुसैन को अंग्रेजों से गहरी नफरत थी ।

उन्होने घोपणा की कि जो भी व्यक्ति किसी अग्रेज को प्राणदड हेतु पकड कर लायेगा उसे 50 रुपये का इनाम दिया जायेगा।

नवाब तफज्जुल हुसैन सात महीने तक अग्रेजो के विरुद्ध फरुखाबाद के शासक रहे। उन्होने शासन प्रबध को सुव्यवस्थित करने का प्रयास किया। अशरतखान, मुल्तान खान, हैदरअली तथा मौहम्मद तकी नवाब की व्यक्तिगत मत्रणा सभा के सदस्य थे। नवाब के राज्य मे केवल फरुखाबाद ही नही बल्कि एटा का भी कुछ भाग सम्मिलित था। समस्त सीमा को पूर्वी तथा पश्चिमी, दो भागो मे बाट दिया गया था तथा उनकी देख-रेख का भार नाजिमो को सौपा गया था। बडे-बडे मुकदमो का निणय मुफ्तियो द्वारा किया जाता था। छोटे-छोटे मामलो का निणय तहसीलदार करते थे। राजस्व के मुकदमो अथवा किराये के मुकदमो का निणय भी तहसीलदार करते थे।

अग्रेजो के समय की भाति भूमि कर अब भी राज्य की आय का प्रमुख साधन था। अधिक आय के लिए नगर शुल्क अथवा चुगी बढा दी गई थी। फेरियो (नावो) के द्वारा प्राप्त शुल्क सिपाहियो के लिए छोड दिया गया था। कोजान और वालेस के अनुसार खसखस अथवा पोस्त की खेती पर प्रतिबध लगा दिया गया था। नवाब ने अफीम (पोस्त द्वारा तैयार किया हुआ नशे का विपैला पदार्थ) का भडार एकत्रित कर लिया था जिसे बेच कर वह खजाने मे अधिक धन जमा करना चाहते थे।

नवाब तफज्जुल हुसैन की सेना मे सीतापुर की 41वी पलटन के तथा कुछ स्थानीय सैनिक भी थे। नवाब ने सेना को सुदृढ करने का प्रयास किया। उन्होने अश्वारोहियो की सख्या को बढाकर 2,200 कर दिया। बाद मे उन्होने पैदल तथा अश्वारोहियो की ग्यारह पलटनो का निर्माण किया। 24 तोपे तथा 200 तोपची नियुक्त किये गये। आगा हुसैन को प्रमुख सेनापति बनाया गया। नवाब तफज्जुल हुसैन का सैन्य-गठन एव शासन प्रबध आस-पास के सब जिलो के शासन-प्रबध से उत्तम था।

नवाब तफज्जुल हुसैन ने जिस समय फर्रुखाबाद का शासन-भार सभाला, अग्रेज अधिकारियो ने फतहगढ के किले मे शरण ले ली। फरुखाबाद के किले को क्रातिकारियो ने चारो ओर से घेर रखा था। वे बार बार उन पर गोलियो की वर्षा करते थे। क्रातिकारियो ने रात और दिन लग कर एक सुरग बनायी जिसके विस्फोट से सारा किला हिल उठा। क्रातिकारी निरतर किले पर चढने का प्रयास कर रहे थे। अग्रेजो को अब किले की रक्षा करना कठिन लग रहा था। कर्नल स्मिथ तथा उनके साथी तीन नावो मे बैठकर 4 जुलाई को प्रात दो बजे कानपुर की ओर चले गये। क्रान्तिकारियो को उनके भागने का आभास मिल गया। वह चिल्लाते हुए उनके पीछे भागे—"फिरगी भाग रहे हैं पकडो।" अग्रेजो ने शीघ्रता से नावें चलाईं। सिपाहियो ने उनका पीछा किया। उन्होने नावो पर गोली चलाई। बहुत से अग्रेजो को मौत के घाट उतार दिया गया और बहुत से घायल हो गये, जो लोग बचकर बिठूर पहुचे उन्हे वहा पर पकड लिया गया तथा उनमे मे अधिकाश को जान से हाथ धोना पडा।

नवाब तफज्जुल हुसैन की अग्रेज सेना से चार बार मुठभेड हुई। पहली लडाई कन्नौज मे हुई, दूसरी लडाई कासगज मे हुई तथा तीसरा युद्ध पटियाली मे हुआ। चौथा तथा अतिम युद्ध काली नदी के किनारे पर हुआ। चौथे तथा निर्णायक युद्ध के समय तक क्राति ने दूसरा रूप ले लिया था। अग्रेज स्थान स्थान पर विजयी होने लगे थे। सितबर 1857 मे अग्रेजो ने दिल्ली पर पुन अधिकार कर लिया था। नवबर 1857 मे अग्रेजो ने लखनऊ पर भी विजय प्राप्त कर ली। तात्या टोपे भी पराजित हो गये थे। अब अग्रेजो का ध्यान फतहगढ की ओर आकृष्ट हुआ। अग्रेजो की एक सेना फतहगढ की ओर बढ रही थी। सर कालिन्स कानपुर से फतहगढ की ओर बढे। नवाब तफज्जुल हुसैन ने अपनी समस्त सेना को अग्रेजो का मुकाबला करने के लिए भेजा। दुर्भाग्यवश 2 जनवरी, 1858 को नवाब के सेनापति ठाकुर पाडे ने लडाई के मैदान मे वीरगति प्राप्त की। ठाकुर पाडे की मृत्यु के उपरात नवाब की सेना फर्रुखाबाद लौट आई। अग्रेजो ने 2 जनवरी, 1858 को फतहगढ के किले मे प्रवेश किया। उनके पहुचने से पहले ही नवाब तफज्जुल हुसैन तथा शहजादा फिरोज ने नगर छोड दिया तथा वे गगा नदी को पार कर बरेली की ओर चले गये। अग्रेजो को किले के अदर बहुत सा धन और सैन्य-सामग्री मिली। उनको लगभग दस लाख रुपये तथा बहुत सी लकडी मिली। यह लकडी तोपो की फैक्ट्री मे काम आती थी। किले के अदर बारूद और सैन्य-सामग्री भी बनाई जाती थी। अग्रेजो को बहुत से सैनिको के कपडे, छोलदारिया तथा तोपें मिली। क्रातिकारियो को किला छोडने से पहले समस्त सैन्य सामग्री को नष्ट कर देना चाहिए था। अग्रेजो के हाथ मे धन और सैन्य-सामग्री पडने देना उनकी एक बडी भूल थी।

विजयी अग्रेजो ने भारतीयो से पूरा-पूरा बदला लिया। अस्थायी सैनिक न्यायालयो ने कितने ही भारतीयो को मृत्यु-दड दिया तथा उन्हे पेडो की शाखाओ से लटका कर फासी दी। नवाब तफज्जुल हुसैन के महल को मिट्टी मे मिला दिया गया। उनकी पत्नी बिल्किस जमानिया बेगम की धन-सपत्ति छीन ली गई। नवाब के परिवार के बहुत से लोगो को मृत्यु-दड दिया गया। अग्रेज सरकार ने नवाब तफज्जुल हुसैन को पकडने के लिए 10,000 रुपये का इनाम घोषित किया।

नवाब तफज्जुल हुसैन तथा अन्य पराजित क्रातिकारी नेपाल की तराई की ओर चले गये थे। सर कालिन कैम्पबेल उनका निरतर पीछा कर रहे थे। नेपाल के राणा जगबहादुर को क्रातिकारियो से कोई सहानुभूति नही थी। अत मे बहुत से क्रातिकारियो ने अग्रेजो के सम्मुख आत्म-समर्पण कर दिया। नवाब तफज्जुल हुसैन भी उनमे से एक थे। नवाब तथा उनके साथियो ने राप्ती नदी को पार किया। उन्होने और उनके 200 साथियो ने अग्रेजो के सम्मुख आत्म-समर्पण कर दिया। वे लोग हाथियो और पालकियो पर बैठकर अग्रेजो के कैम्प तक पहुचे थे। उनके पीछे पीछे स्थानीय लोगो की भीड थी। नवाब तफज्जुल हुसैन पर निरपराध अग्रेज स्त्री और बच्चो को मारने का आरोप लगाया गया था। दो ईसाई स्त्रिया

नवाब तफज्जुल हुसैन से पहले ही परिचित थी। उन्होने बार बार कहने का प्रयास किया कि नवाब निरपराध है परन्तु अग्रेज उन्हे अपराधी मानते रहे।

नवाब तफज्जुल हुसैन पर देशद्रोह और फतहगढ के हत्याकाड के अपराध के लिए मुकदमा चला। उन्हे सब अभियोगो के लिए दोषी ठहराया गया तथा न्यायालय ने उन्हे प्राण-दड दिया। जिस समय अतिम निर्णय सुनाया गया, न्यायालय का कमरा भीड से खचाखच भरा हुआ था। नवाब तफज्जुल हुसैन उस समय भी शात थे तथा उनके मुख पर 'क्रुद्ध' एव 'निरपेक्ष' भाव था। न्यायाधीश ने कहा कि नवाब ने केवल देशद्रोह ही नही किया बल्कि निरपराध स्त्री बच्चो की नृशस हत्या भी की है। मुकदमे के समय भी उनके मुख पर पश्चाताप का कोई चिह्न नही दिखाई दिया। वह पहले से ही जानते थे कि अग्रेजो के न्यायालय मे अपने को निर्दोष सिद्ध करना असभव है। वह एक वीर सेनानी की भाति अडिग खडे रहे।

नवाब तफज्जुल हुसैन के आत्म समपण से पहले मेजर बरो ने उन्हे एक पत्र लिखा था। इस पत्र मे लिखा हुआ था कि नवाब निश्शक-भाव से आत्म समपण कर सकते है क्योकि उनके सिर पर किसी यूरोपियन को मारने का अपराध नही है। इस पत्र के आधार पर न्यायाधीश ने नवाब की सजा को मृत्यु-दड से बदलकर आजीवन कारावास मे परिवर्तित कर दिया। निणय होते ही नवाब से कहा गया कि वह अपने रहने के लिए देश से बाहर कोई भी स्थान चुन सकते है। नवाब तफज्जुल हुसैन ने मक्का जाने का निर्णय लिया। नवाब को तैयारी के लिए थोडा सा समय दिया गया। नवाब आजीवन कारावास से पहले बेगमो तथा बच्चो से अतिम बार मिलना चाहते थे। उन्हें केवल कुछ क्षणो के लिए अपने परिवार को देखने की अनुमति मिली। इस दुखद अश्रुपूर्ण मिलन के तुरन्त बाद उन्हे लोहे की भारी-भारी बेडिया पहना दी गईं। उन्हें अपने साथ केवल दो सहायक ले जाने की अनुमति मिली थी। उनकी गाडी के चारो ओर भारी पहरा था तथा छह बदूकधारी साथ-साथ चल रहे थे। जिस समय उनकी गाडी चली, देशवासियो की भीड उन्हें अतिम विदा देने के लिए वहा एकत्रित हो गई थी। सबकी आखे अश्रुपूरित थी। वह देश को छोडकर जा रहे थे परन्तु उनकी अमिट स्मृति देशवासियो के हृदय मे थी।

# जैतपुर की रानी

1857 के स्वतन्त्रता संग्राम मे स्त्रियो का योगदान भी कम महत्वपूर्ण नही था। रानी लक्ष्मीबाई और बेगम हजरत महल के नाम से तो देश का बच्चा बच्चा परिचित है ही, परन्तु कुछ अल्पज्ञात महिलाओ, जैसे जैतपुर की रानी, धार की राजमाता, तुलसीगढ की रानी तथा रामगढ की रानी ने भी अग्रेजो से डट कर लोहा लिया।

जैतपुर बुदेलखण्ड की एक छोटी सी रियासत थी। इस राज्य के स्वतन्त्र अस्तित्व को लार्ड एलनबरो ने समाप्त कर दिया था। इतिहासकार पडित सुन्दर लाल के अनुसार जिसकी लाठी उसकी भैस के सिद्धान्त पर लार्ड एलनबरो ने 27 नवम्बर, 1842 को जैतपुर के दोनो किलो पर अपना अधिकार कर लिया। जैतपुर के राजा स्वतन्त्र विचारो के व्यक्ति थे। जैतपुर पर अधिकार स्थापित करने के उपरात अग्रेजो ने वहा के शासन की बागडोर एक अन्य राजा के हाथो मे सौप दी। यह राजा अग्रेजो के हाथो मे कठपुतली मात्र था। राजा परीक्षित अपने दस साथियो के साथ जैतपुर छोडकर भाग गए।

जैतपुर की रानी वहा के विद्रोही शासक राजा परीक्षित की पत्नी थी। जैतपुर के राजा को अग्रेजो ने 1200 रु० प्रतिमाह की पेशन देनी आरम्भ कर दी। राजा परीक्षित के मन मे अग्रेजो के प्रति गहरा आक्रोश था और इस अपमान के कारण अन्त मे उनकी मृत्यु भी हो गयी। इन सब कारणो से जैतपुर की रानी के लिए अग्रेजो का व्यवहार असह्य हो उठा। उन्होने अपने राज्य पर पुन अधिकार प्राप्त करने के लिए अग्रेजो के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा खडा कर दिया। समस्त मालवा प्रदेश मे अग्रेजो के प्रति पहले से ही गहरा असतोष था। बानपुर, शाहगढ, पतेरा आदि के राजाओ ने भी विद्रोह कर दिया। अब जैतपुर क्षेत्र मे वहा की रानी भी अग्रेजो के विरुद्ध हो गयी और उन्होने भी विद्रोह का झण्डा खडा कर दिया।

1857 मे क्रांति का शखनाद बजते ही जैतपुर की रानी ने अपने को स्वतन्त्र शासक घोषित कर दिया। रानी ने तहसीलदारी के समस्त सुरक्षित कोष पर अपना अधिकार कर लिया। हमीरपुर के मजिस्ट्रेट एव कलेक्टर जी० एच० फ्रीलिंग ने लिखा है कि "उस परगना के बहुत से ठाकुर रानी का साथ दे रहे थे।" दतिया के देशपत एव कुज प्रसाद भी रानी का साथ दे रहे थे। राजा हृन जी एव टटसिंह भी रानी के साथ थे। ये दोनो देशपत के सबधी थे। देशपत ने अन्त समय तक जैतपुर की रानी को अपना सहयोग दिया। 30 दिसम्बर 1857 के 'हिन्दू पैट्रियट' कलकत्ता के अक मे लिखा हुआ था—बुदेलखण्ड क्षेत्र मे समय-समय पर विद्रोह की ज्वाला फूट पडती है। जैतपुर क्षेत्र मे देशपत का प्रभुत्व है। इस प्रदेश

मे चारो ओर घना जगल है और विद्रोहियो को पकडना सरल नही है। अग्रेजो ने देशपत के पास अपने कई सदेशवाहक भेजे, परन्तु उसने सात मे से छह के टुकडे-टुकडे कर डाले। हमीरपुर के मजिस्ट्रेट ने देशपत को "कुख्यात डाकू" की सज्ञा दी है। ऐसे अद्वितीय साथी के सहयोग से जैतपुर की रानी ने अग्रेजो को नाको चने चबवा दिये।

देश का यह दुर्भाग्य था कि जहा जैतपुर की वीर रानी और देशपत जैसे लोग, अपने प्राणो की बाजी लगाकर अग्रेजो के विरुद्ध लड रहे थे वहा अपने ही देश के अन्य राजा अग्रेजो का साथ दे रहे थे। राजा—चरखेरी अग्रेजो के मित्र थे। चरखेरी की सेना ने रानी जैतपुर के विरुद्ध हमला बोल दिया। आठ-दिन तक घमासान युद्ध होता रहा। रानी जैतपुर ने अपूर्व वीरता का परिचय दिया, किन्तु अन्त मे उन्हे जैतपुर छोड देना पडा। रानी टिहरी क्षेत्र मे शरणार्थी बनकर भटकती रही। उनके सहयोगी दतिया वे देशपत जैतपुर के जगलो मे छुप गये और अन्त तक अग्रेजो से लोहा लेते रहे। वीर सेनानी हार कर भी नही हारते। जैतपुर की रानी की वीरता एव विद्रोह की भावना इतिहास के पन्नो मे अविस्मरणीय है।

# राधा गोविन्द

देश के कुछ अमर सेनानियो के नाम इतिहास के पृष्ठो मे गुम होकर रह गये हैं। राधा गोविन्द भी ऐसे ही वीर क्रातिकारी हैं जिनके नाम से बहुत कम लोग परिचित हैं।

अमृतराव विठूर के पेशवा बाजीराव द्वितीय के दत्तक भ्राता थे। बाजीराव की भाति अग्रेजो ने उनसे भी सधि की और उन्हें पेंशन देकर उत्तर प्रदेश मे कर्वी—चित्रकूट तीर्थ स्थान मे रहने के लिए स्थान दे दिया। उन्होंने कुछ धन-राशि लेकर पेशवाई से अपने अधिकार का त्याग कर दिया। उनकी सैनिक टुकडी के लिए एक छावनी दी गई जिस पर अमृतराव बहादुर की सत्ता सर्वमान्य थी। अमृतराव की 1853 मे मृत्यु हो गई। विनायकराव उनके उत्तराधिकारी बने। नारायणराव और माधवराव दोनो ही विनायकराव के दत्तक पुत्र थे। विनायकराव ने माधवराव को अपना उत्तराधिकारी बनाया। क्राति के समय माधवराव की आयु केवल दस वर्ष थी। राधा गोविन्द उनके चाचा बाबू हरीचद (वाराणसी के) तथा मुकदराव अल्पवयस्क माधवराव के सरक्षक एव सह कार्यनिष्पादक नियुक्त हुए। उन्हे सपत्ति एव छावनी के प्रबध का कार्य भार भी सौंपा गया।

बादा व कर्वी के क्रातिकारी नेता पूणत नानासाहब के सहयोगी बन गये थे। 14 जून, 1857 को बादा मे नवाब अली बहादुर का शासन स्थापित हो गया था। चित्रकूट (कर्वी) के नारायणराव तथा माधवराव ने बादा मे क्राति की सफलता का समाचार सुनते ही कर्वी मे घोषणा करवा दी कि वहा पेशवाइ राज्य स्थापित हो गया है। राधा गोविन्द नारायणराव तथा माधवराव के प्रमुख सलाहकार थे। 19 सितबर, 1858 को इलाहाबाद से जी० ए० एब्रमस्टन ने एक तार दिया था "राधा गोविन्द नारायणराव तथा माधवराव के प्रमुख साथी है तथा उन्हे पकडने की शीघ्र सभावना है।" कर्वी मे पेशवा की अतुल सपत्ति तथा युद्ध सामग्री क्रातिकारी सेना के लिये उपलब्ध थी। वहा उन्होने तोप ढालने तथा अन्य युद्ध सामग्री बनाने का बडा अच्छा प्रबन्ध कर रखा था। यमुना के मुख्य घाटो पर सैनिक चौकिया बना रखी थी। नानासाहब व नारायणराव मे पत्र व्यवहार भी चलता रहता था। कर्वी से राजपुर तथा मऊ तक क्राति की अलख जगाने के लिए दूत भी भेजे गये। दानापुर तथा नागौर के सैनिका को कर्वी की क्रातिकारी सेना मे भर्ती किया गया था। नारायणराव एव माधवराव की समस्त क्रातिकारी गतिविधियो मे राधा गोविन्द उनका दाहिना हाथ थे।

17 जुलाई, 1858 को जनरल ह्विटलाक ने नारायणराव पर आक्रमण कर दिया। राव एव उनके प्रमुख सहयोगी राधा गोविन्द ने स्थान-स्थान पर सैनिक चौकिया

बनवा रखी थी। अंग्रेज सेना आगे बढती चली गई। उन्हें बार-बार सूचना मिलती रही कि नारायणराव व माधवराव आत्मसमर्पण कर रहे हैं। अंग्रेज सेना के कर्वी पहुचने पर क्रातिकारियो की सेना तितर-बितर हो गयी। राधा गोविन्द ने समझ लिया कि यह समय व्यर्थ वीरता दिखाने का नही है। वह बहुत-सा धन, आभूषण, क्रातिकारी सेना तथा अपने साथियो को लेकर मानिकपुर के पहाडी किले मे चले गये। यह स्थान कर्वी से 20 मील दक्षिण की ओर था। दुर्भाग्यवश, वह अपने साथ कोई तोप नही ले जा सके। अत मे नारायण राव व माधवराव ने आत्मसमर्पण कर दिया। अंग्रेजो का नगर तथा राजमहल पर आधिपत्य हो गया। नारायणराव व माधवराव को महल के एक कमरे मे बदी बना दिया गया। अंग्रेज सेनापति को कर्वी मे 42 तोपे, 2,000 बदूकें तथा लगभग दो करोड रुपये मिले। महल के तहखानो मे सोना चादी व अमूल्य आभूषण और हीरे भरे हुए थे। यह अतुल धनराशि सेना मे पुरस्कार स्वरूप बाट देने का निर्णय हुआ। नारायणराव व माधवराव के इस विशाल खजाने की देख-रेख के लिए सशस्त्र सैनिक नियुक्त कर दिये गए।

अंग्रेजो ने जुलाई की तपती हुई गर्मी मे कर्वी पर आक्रमण किया था। नारायणराव व उनके प्रमुख सलाहकार राधा गोविन्द यह अनुमान नही लगा सके कि ऐसी भीषण गर्मी मे अंग्रेज सेना कर्वी तक पहुच पाएगी। वह आक्रमण से स्तभित रह गये। आक्रमण के उपरात भी उनका तोप ढालने का कार्य यथापूर्व चलता रहा। वह सेना के लिए सिपाही भी भर्ती करते रहे। उनकी पराजय हुई किंतु राधा गोविन्द जो एक वीर सेनानी थे पहाड़ियो मे जा छिपे और अंग्रेजो के विरुद्ध युद्ध की चिनगारी को बुझने नही दिया।

राधा गोविन्द ने अपनी क्रातिकारी सेना को लेकर 22 दिसबर, 1858 की दोपहर को कर्वी की अंग्रेज रक्षक-सेना पर आक्रमण कर दिया। उन्होने नगर पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। राधा गोविन्द और उनके वीर सिपाहियो ने नारायणराव के महल को चारो ओर से घेर लिया। कर्वी का महल बहुत बडा था। महल मे नियुक्त अंग्रेज सेना अपनी रक्षा करने मे सर्वथा असमर्थ थी। राधा गोविन्द और उनके क्रातिकारी साथी आगे बढते जा रहे थे। अंग्रेज लगभग निरुपाय थे किंतु फिर भी वे अपने सीमित साधनो के साथ क्रातिकारियो का मुकाबला कर रहे थे। इसी समय रात्रि का अधकार घिर आया। राधा गोविन्द अपनी सेना के साथ रात्रि विश्राम के लिए चले गए। अगले दिन राधा गोविन्द एव उनके साथी कर्वी के किले पर चढने के लिए सीढिया बनाने मे व्यस्त रहे। 24 दिसम्बर को उन्होने एक निकटवर्ती जागीरदार पर आक्रमण कर दिया। उन्होने उस जागीरदार की तीन तोपें छीन लीं। इन तोपो को लेकर वे एक बार फिर अंग्रेज रक्षा सेना पर आक्रमण करने के लिए उद्यत हो गए। जनरल ह्विटलाक को राधा गोविन्द द्वारा की गयी क्राति की सूचना मिली। उनका सैनिक शिविर उस समय मातुवा नामक स्थान पर था। वह अपने साथ मद्रास-हार्स-आर्टिलरी की एक पलटन, हैदराबाद अश्वारोही सेना तथा 12 वी पलटन



राधा गोविन्द ने अपूर्व साहस एवं वीरता के साथ अंग्रेजों से लोहा लिया।

के शूलधारियो के म्क्वैड्रन को लेकर आगे बढे। पहले बादा पहुचे और वहा से कर्वी पहुच गये। राधा गोविन्द ने तीन दिन से कर्वी के महल पर घेरा डाल रखा था और अग्रेज गैरिसन को घेर लिया था। अग्रेज सेना बिल्कुल थक चुकी थी। हि्वटलाक और राधा गोविन्द की सेना मे युद्ध हुआ। राधा गोविन्द की सेना को काफी क्षति हुई। परतु फिर भी राधा गोविन्द अपनी सेना को लेकर वहा से बच निकले। हि्वटलाक ने कर्वी मे नियुक्त अग्रेज गैरिसन की रक्षा की। हि्वटलाक की सेना की समय पर सहायता से ही उनकी रक्षा सभव हो सकी।

राधा गोविन्द एव उनके सैनिको ने कर्वी से पाच मील दूर अपना पडाव डाल रखा था। हि्वटलाक को उनसे निरतर खतरा बना हुआ था। वे किसी भी समय उन पर पुन आक्रमण कर सकते थे और उनकी विजय को पराजय मे पलट सकते थे। जनरल हि्वटलाक ने 29 दिसम्बर, 1858 को कर्वी से 5 मील दक्षिण पूव मे पुनवारी नामक स्थान पर राधा गोविन्द पर आक्रमण कर दिया। राधा गोविन्द ने अपूव साहस एव वीरता के साथ अग्रेजो से लोहा लिया। राधा गोविन्द को सैनिक दृष्टि से लाभ भी था। उनकी सेना ने ऊचाई के स्थान पर पडाव डाल रखा था। किन्तु अग्रेजो की 43वी पलटन तथा रीवा की सेना ने अनायास तेजी से आगे बढकर आक्रमण किया और उनकी तोपे छीन ली। राधा गोविन्द व उनके साथियो की वीरता अद्वितीय थी। उनके सैनिक कट कट कर लडाई के मैदान मे गिर रहे थे परतु उन्होने फिर भी हथियार नही डाले। सौ क्रातिकारी सिपाहियो ने अपने प्राणो की आहुति वही उसी समय रणभूमि मे दे दी। अग्रेज अश्वारोही सेना ने उन्हे सब ओर से घेर लिया था। वीरता के अग्रदूत राधा गोविन्द ने रणभूमि मे लडते-लडते अपने प्राण मातभूमि के चरणो मे न्यौछावर कर दिये और वीरगति प्राप्त की। राधा गोविन्द के कुछ क्रातिकारी साथियो ने जगल मे शरण ली। अग्रेजो ने जगल को भी चारो ओर से घेर लिया और एक-एक क्रातिकारी को चुन-चुन कर हत्या कर दी। लगभग तीन सौ क्रातिकारियो ने अपने शीश मातृभूमि की सेवा मे अर्पित किए। क्रातिकारियो के हाथी, घोडे, ऊट तथा अन्य सामग्री अग्रेजो के हाथ लगी।

राधा गोविन्द के साथियो ने अग्रेजो के विरुद्ध युद्ध जारी रखा। वे घने जगलो मे छुप गये। उन्हे जब मौका मिला तो दक्षिण मे कोटी की ओर बढे। अग्रेज सेना ने अनायास ही उन पर आक्रमण कर दिया। अपने वीर नेता राधा गोविन्द की भाति अधिकाश क्रातिकारियो ने रण-क्षेत्र मे वीरगति प्राप्त की। रणभूमि मे मरने वाले वीर मरते नही, वह इतिहास के पृष्ठो को उज्ज्वल कर देते हैं।



बहादुर वली दाद खां को पराजित करने में अंग्रेज सेना असमर्थ रही ।

# वली दाद खां

मालागढ के वली दाद खा क्राति के उग्रतम नेताओ मे से एक थे। वह दिल्ली के बादशाह के सबधी थे और मिट्टी के किले और कुछ तोपो के आधार पर ही अग्रेजो के विरुद्ध उठ खडे हुए थे। वली दाद खा के विद्रोहियो का साथ देने के निणय को 'पागलपन' की सज्ञा दी जाती है। देश पेम के मतवाले वीर सर्वदा ही 'पागलपन' की सीमा तक मरने और मारने के लिए आतुर हो उठते है। वली दाद खा भी उनसे भिन्न नही थे।

वली दाद खा के अग्रेजो के प्रति आक्रोश के कुछ व्यक्तिगत कारण भी थे। उनका अपने परिवार से सपत्ति-सबधी झगडा चल रहा था। सर डेविड आक्टरलोनी के समय से दिल्ली के प्रत्येक रैजिडेंट तथा गवर्नर जनरल के सम्मुख मुक्दमा पेश किया गया। उनके न्यायालय मे मुकदमा बार-बार आरभ होता था तथा बार बार समाप्त भी हो जाता था। 1855 तक भी कोई अतिम निणय नही हो सका। वली दाद खा के हृदय मे अग्रेजो के प्रति आक्रोश उमडता रहा और जैसे ही देश मे क्राति की लहर उठी वह उनसे बदला लेने के लिए आतुर हो उठे।

मालागढ का किला वली दाद खा के कार्य का प्रमुख केद्र था। यह किला बुलन्दशहर से चार मील उत्तर की ओर स्थित था तथा ग्राड ट्रक रोड से केवल 900 गज दूर था। इसी किले से वली दाद खा ने रण हुकार लगायी और अग्रेजो के छक्के छुडा दिए।

ग्राड ट्रक रोड के उत्तरी सिरे पर हापुड से नौ मील दूर, गुलावटी की सैनिक चौकी पर, वली दाद खा का अधिकार था। मालागढ का किला ग्राड ट्रक रोड के बिल्कुल समीप था। वली दाद खा ने अग्रेजो की आगरा और मेरठ के बीच की सचार व्यवस्था को तहस-नहस कर दिया था। वह सडक पर से आने-जाने वाली क्रातिकारी टुकडियो को अपनी सेना मे भर्ती कर लेते थे।

वली दाद खा ने अलीगढ के समीप खुर्जा पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था। नवाब और अग्रेजों की सेना की कई बार मुठभेड हुई। 29 जुलाई तथा 10 सितम्बर को वली दाद खा का अग्रेजो की सेना से गुलावटी के निकट युद्ध हुआ। बहादुर वली दाद खा को पराजित करने मे अग्रेज सेना असमर्थ रही। वह बार-बार वली दाद खा पर आक्रमण करते रहे परन्तु कोई परिणाम नही निकला।

वली दाद खा दिल्ली के आसपास के क्षेत्र मे रहने वाले असतुष्ट गूजरो से लगान

वसूल करते थे। दिल्ली के बादशाह के हुक्म से मालागढ के वली दाद खा को अलीगढ का सूबेदार बना दिया गया तथा गौस मोहम्मद को नायब सूबेदार नियुक्त किया गया।

वली दाद खा का सम्पर्क खान बहादुर खान और नाना धुधूपत जैसे अग्रगण्य क्रांतिकारी नेताओ से भी था। 21 अक्तूबर को क्रांतिकारी नेता वली दाद खा बरेली पहुचे। खान बहादुर खान ने उनका स्वागत किया तथा चार-सौ रुपये भेंट स्वरूप दिये। नानासाहब 25 मार्च, 1855 को बरेली पहुचे। उनके वहा पहुचने के उपरात क्राति के अग्रगण्य नेता बरेली मे एकत्रित हुए। नानासाहब ने वली दाद खा के पुत्र इस्माइल खा को फतहगढ जीतने का काम सुपुर्द किया तथा फिरोजशाह ने निचले दोआब मे युद्ध का भार सभाला। मालागढ के निकटवर्ती स्थानो के प्रमुख क्रातिकारी नेता वली दाद खा के साथ थे।

24 सितबर 1857 को मेरठ के कमिश्नर ने एक पत्र मे लिखा—हमे भय है कि वली दाद खा अपनी स्थिति को और मजबूत कर रहा है। नवाब के निमत्रण पर झासी की ब्रिगेड भी बुलन्दशहर पहुच गई थी। वली दाद खा और उनके सहयोगी मालागढ की रक्षा करने के लिए कृत सकल्प थे।

24 सितबर, 1857 को बुलन्दशहर मे वली दाद खा और अग्रेजो की सेना मे घमासान युद्ध हुआ।

अग्रेज तोपो की गोलाबारी के सम्मुख क्रातिकारी सेना तितर-बितर हो गई। अग्रेजो की अश्वारोही सेना ने उनका पीछा किया और 9वीं पलटन के शूलाधारी सेनानी आगे बढे। गलियो के अदर, घरो के ऊपर से उन पर निरतर गोलाबारी हो रही थी जिसके कारण उन्हे बहुत क्षति हुई। क्रातिकारी सेना को शहर के बाहर रहना पडा। क्रातिकारी सेना अग्रेज सेनाधिकारियो पर बार-बार आक्रमण कर रही थी। क्रातिकारियो की योजना के अनुसार सेना पर आक्रमण करने के बजाय सैन्य अधिकारियो पर आक्रमण करना अधिक लाभप्रद था। क्रातिकारियो की इस नीति के कारण अग्रेजो के बहुत से सेनाधिकारी घायल हुए। अत मे अग्रेज सेना विजयी हुई और 29 सितबर को मालागढ के किले के अदर पहुची। वली दाद खा एव उनके साथी किले को छोडकर जा चुके थे। अग्रेजो ने तुरत किले को तहस नहस कर दिया। परन्तु अग्रेजो को भी बलिदान देना पडा। एक बारूद की सुरग फट जाने से लैफ्टिनेंट होम की मृत्यु हो गई। यह लैफ्टिनेट होम वही था जिसने दिल्ली के कश्मीरी गेट का विध्वस किया था। ले० होम ने मालागढ के किले की तोपो से अच्छी तरह नाकाबदी की थी और सुरग लगाकर किले को उडाने का प्रयास भी किया। गोलो की मार से किले की दीवारें हिल उठी। देखते-देखते किला खण्डहर बन गया।

वली दाद खा मालागढ छोडकर चले गये परन्तु वह अग्रेजो से निरन्तर लडते रहे। वली दाद खा अन्त मे कहा गए तथा कहा जाकर उनकी मृत्यु हुई, इस बारे मे दस्तावेज चुप है। किन्तु यह बात निर्विवाद है कि कई साल तक उनका अग्रेजो से सघर्ष चलता रहा। सभवत मालागढ मे युद्ध के उपरात वह रुहेलखण्ड चले गए।

# नर्तकी अजीजन

1857 की जन-क्रांति के समय अजीजन कानपुर मे नर्तकी थी। धन वैभव घुंघरुओ की रुनझुन और संगीत की सुमधुर स्वर लहरी के बीच रहने वाली अजीजन गणिका का हृदय देशप्रेम की भावना से ओत-प्रोत था। वह एक वारांगना न होकर एक वीरांगना थी। वह त्याग और देश-प्रेम का एक अभूतपूर्व उदाहरण थी उसके कार्यो ने उसे महान बना दिया। श्री विनायक दामोदर सावरकर ने अजीजन के विषय मे लिखा है—"अजीजन एक नर्तकी थी परन्तु सिपाहियो को उससे बेहद स्नेह था। अजीजन का प्यार साधारण बाजार मे धन के लिए नही बिकता था। उनका प्यार पुरस्कार स्वरूप उस व्यक्ति को दिया जाता था जो देश से प्रेम करता था। अजीजन के सुन्दर मुख की मुस्कराहट भरी चितवन युद्धरत सिपाहियो को प्रेरणा से भर देती थी। उनके मुख पर भृकुटी का तनाव युद्ध से भागकर आये हुए कायर सिपाहियो को पुन रण क्षेत्र की ओर भेज देता था।"

कानपुर 1857 की क्रांति का मुख्य केन्द्र था। नाना धुधूपंत और अजीमुल्ला खा के संदेश वाहक देश के कोने-कोने मे जाकर क्रांति की अलख जगा रहे थे। क्रांति के लिए देश को तैयार करने के लिए नाना धुधुपंत ने भारत भ्रमण किया। समस्त देश मे उत्साह था। देशवासी अंग्रेजो को अपने देश से निकाल देने के लिए दृढ संकल्प थे। इस वातावरण ने सुन्दरी गणिका अजीजन के हृदय को परिवर्तित कर दिया और उन्होने देश के लिए अपने प्राणों को न्योछावर कर देने का निर्णय लिया। कानपुर मे शमशुद्दीन खा सिपाहियो के नेता थे तथा सूबेदार टीकासिंह के यहा गुप्त मन्त्रणाए हुआ करती थी। 1 जून, 1857 की सन्ध्या को गंगा नदी के किनारे एक गुप्त सभा हुई। गुप्त सभा मे शमशुद्दीन खा, सूबेदार टीकासिंह के साथ साथ नानासाहब, उनके भाई बालासाहब व अजीमुल्ला खा भी उपस्थित थे। इस सभा मे अजीजन ने प्रमुख भाग लिया। क्रांति के सूत्रधार नाव मे बैठ गंगा की बीच धारा के निकट पहुच गए। गंगा के पवित्र पानी को साक्षी बनाकर उन्होने देश से अंग्रेजो को बाहर खदेड देने की योजना बनाई। अगले दिन शमशुद्दीन खा अजीजन के यहा गये और उन्हे आश्वासन दिया कि अब अंग्रेजो के राज्य का अन्त हो जाएगा और पेशवा नानासाहब के राज्य का शुभारम्भ होने का पुनीत दिन आ पहुचा है। सुन्दरी अजीजन का हृदय देशप्रेम की भावना से भरपूर था। यह समाचार सुनकर उसका हृदय उत्साह से भर उठा।

जून 1857 मे नाना धुधूपंत को बिठूर का शासक घोषित कर दिया गया। नर्तकी अजीजन सम्पूर्ण उत्साह के साथ देश कार्य मे लग गयी। इतिहासकार चिक के अनुसार "कोतवल

सलामतुल्ला ने हरा झण्डा लेकर एक जुलूस निकाला। शशिभूषण चौधरी जैसे विख्यात इतिहासकार ने स्वीकार किया है कि घोडे पर बैठ कर अजीजन जुलूस के साथ-साथ चल रही थी। अजीजन ने स्वय कहा है कि अजीमुल्ला खा ने हरा झण्डा कानपुर की एक नहर के पास फहरा दिया। उस समय वहा पर हजारो व्यक्ति एकत्रित थे। अजीजन ने स्त्रियो की एक सेना एकत्रित कर ली थी। महिलाए पुरुषो के वेश मे, हाथ मे तलवार लिये, घोडा पर चढकर लोगो को स्वतन्त्रता के लिए प्रेरित करती थी। वे घायल सिपाहियो की सेवा करती थी। चारो ओर गोलियो की बौछारो मे आगे बढकर अजीजन और उनकी सहयोगिनी स्त्रिया सिपाहियो को फल, मिठाई और रसद बाटती थी। अग्रेज सेनाधिकारी कर्नल विलियम ने कानपुर के एक व्यापारी से अजीजन के विषय मे पूछताछ की। व्यापारी जानकी प्रसाद ने बताया—"जिस समय कानपुर मे स्वतन्त्रता का प्रतीक हरा झण्डा फहराया गया वह पुरुष वेश मे घोडे पर वहा उपस्थित थी। वह तमगो तथा गोलियो के पट्टे से सुसज्जित थी। मैंने तथा हजारो व्यक्तियो ने उन्हे वहा देखा।"

कानपुर मे नानासाहब की पराजय के उपरान्त अजीजन को बदी बना लिया गया। अग्रेज सेनाधिकारी हैवलोक अजीजन की सुदरता को देखकर स्तब्ध रह गये। श्रीनिवास बालाजी हार्डिकर ने अपनी पुस्तक "1857 की चिनगारिया" मे अजीजन की मृत्यु का मार्मिक वर्णन किया है। उन्होने लिखा है कि जनरल हैवलोक यह विश्वास नही कर सके कि यह अलौकिक सौन्दर्य रणचण्डी का रूप धरकर लडाई के मैदान मे भी हुकार लगा सकती है। जनरल हैवलोक ने वीरता की प्रतिमूर्ति अजीजन से कहा कि यदि वह अपराधो के लिए माफी माग ले तो उसे क्षमा कर दिया जाएगा। अजीजन ने माफी मागने के स्थान पर हुकार लगायी—मैं अग्रेजो का विनाश चाहती हू। सौन्दर्य की देवी अजीजन को गोलियो से भून दिया गया। मरते समय उनके मुख से यह अन्तिम शब्द निकले "नानासाहब की जय।" अजीजन के बलिदान ने उन्हे महान बना दिया है। कृतज्ञ देशवासी उन्हे स्नेह और श्रद्धा से याद करते रहगे।

# बख्त खां

श्री सुन्दरलाल के शब्दो मे—"दिल्ली के स्वतन्त्रता सग्राम का मुकुट यदि बहादुरशाह था और हाथ पैर हजारो हिन्दू और मुसलमान वीर सिपाही थे तो उस सग्राम का दिल और दिमाग बख्त खा था।" बख्त खा वीर सेनापति थे तथा वह एक ईमानदार व्यक्ति भी थे। नि सदेह वह बुदेलखण्ड-क्षेत्र के योग्यतम क्रातिकारी नेताओ मे से एक थे।

बख्त खा अग्रेजो की भारतीय सेना के विख्यात तोपखाने मे सूबेदार के पद पर नियुक्त थे। बख्त खा ने इस तोपखाने मे, सेना के अधीन प्रथम अफगान युद्ध मे भी काय किया था। बख्त खा ने चालीस वष तक सेना मे काय किया तथा जिस समय क्राति का आरभ हुआ, उनकी आयु काफी अधिक हो चुकी थी। इतनी अवधि तक अग्रेजो के अधीन काय करने के पश्चात भी उन्होने क्राति मे भाग लेना श्रेयस्कर समझा।

कहा जाता है कि उनका सबध दिल्ली के शाही परिवार से था। कुछ लोग मानते है कि वह सुल्तानपुर के रहने वाले थे तथा उनका सबध अवध के शाही परिवार से था। वह एक योग्य व्यक्ति थे। अग्रेज अधिकारियो ने भी लिखा है कि वह विशालकाय, कर्तव्यनिष्ठ तथा मेधावी अधिकारी थे।

31 मई, 1857 को बरेली नगर अग्रेजो की पराधीनता के कठिन-पाश से मुक्त हो गया। अग्रेजो का झडा नीचे उतार दिया गया तथा उसके स्थान पर स्वतत्रता का प्रतीक दिल्ली राज्य का हरा झडा लहराने लगा। स्वतत्रता प्राप्त करने के तुरन्त बाद बख्त खा ने क्रातिकारी सेना के प्रधान सेनापति के पद का भार सभाल लिया। सेनापति के पद का भार ग्रहण करते ही बख्त खा ने सिपाहियो से कहा कि स्वाधीनता प्राप्त करने के पश्चात उन्हे शाति और न्याय का व्यवहार करना चाहिए। खान बहादुर खा रुहेलखड के स्वतत्र शासक नियुक्त हुए। अपने पद का भार सभालने के पश्चात खानबहादुर खा शहर के अ य प्रतिष्ठित लोगो के साथ क्रातिकारी नेता बख्त खा को बधाई देने के लिए छावनी गये। बख्त खा ने खान बहादुर खा का आदरपूर्वक स्वागत किया तथा उन्हे ग्यारह तोपो की सलामी दी। बख्त खा ने उन्हे हर प्रकार से अपनी सहायता देने का वचन दिया।

सेनापति बख्त खा ने 11 जून, 1857 को एक बहुत बडी सेना लेकर क्रातिकारियो की सहायता करने के उद्देश्य से दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। सैनिको को छह महीने का वेतन दिया जा चुका था तथा सेनापति बख्त खा अपने साथ चार लाख रुपये भी लाये थे।



बादशाह ने मैत्रीपूर्वक सेनापति बख्त खाँ का हाथ अपने हाथ में ले लिया।

सेनापति बख्त खा की सेना मुरादाबाद होती हुई दिल्ली पहुची। दिल्ली मे उनके पहुचने का समाचार 29 जून, 1857 को प्राप्त हुआ। उस समय यमुना नदी मे बाढ आई हुई थी। बादशाह बहादुरशाह ने पुल-प्रबधक को आदेश दिया कि वह जितनी नावें हो सकें एकत्र करे तथा सेना को नदी के इस पार निर्विघ्न उतार द। 30 जून को बादशाह ने अपने ससुर समसामुद्दौला नवाब अहमद कुली खा को बरेली की सेना तथा सेनापति बख्त खा का स्वागत करने के लिए भेजा। 12 जुलाई को वह उन्हे लेकर बादशाह के सम्मुख उपस्थित हुए। बादशाह ने मैत्रीपूवक सेनापति बख्त खा का हाथ अपने हाथ में लिया। बादशाह सेनापति बख्त खा से बहुत प्रसन्न हुए। उन्होने सेनापति बख्त खा को ढाल और तलवार दी तथा 'सिपहसालार' की पदवी प्रदान की। बादशाह ने सेना मे मिठाई वितरित करने के लिए चार हजार रुपये भी दिये। समस्त अधिकारियो को आदेश दिया गया कि वे बख्त खा की आज्ञाओ का पालन करें। बख्त खा को शहजादा मिर्जा मुगल के स्थान पर प्रधान सेनापति नियुक्त किया गया तथा उन्हे समस्त क्रातिकारी सेनाओ का भार सौंप दिया गया।

सेनापति बख्त खा के सम्मुख कठिन काय था। जिस समय वह दिल्ली पहुचे, चारो ओर अराजकता छाई हुई थी। सिपाही अग्रेजो को ढूढने के बहाने से किसी भी नागरिक के घर मे घुस आते थे, तालो को तोड देते थे और जो जी म आता लूट लेते थे। बहादुरशाह के पास शिकायत आती थी—"शाही फौजे बाजार और घरो मे घुस जाती है तथा लोगो के कपडे बिस्तर तथा बर्तन तक उठाकर ले जाती ह। सिपाहियो पर कोई नियत्रण नही था। वह लाल किले तक के बाग मे घुस जाते थे। बादशाह स्वय घोडे पर चढकर दिल्ली की गलियो मे गये और लोगो से नियमित दैनिक कार्य करने का अनुरोध किया, परन्तु कोई भी फल नही निकला। शहजादो की भी असख्य शिकायतें थी।

सेनापति बख्त खा ने बादशाह से कहा कि यदि उन्होने किसी शहजादे को भी लूट-मार मे भाग लेते पाया तो वह उनके नाक-कान कटवा देंगे। बादशाह ने उत्तर दिया—"तुम्हे सम्पूण अधिकार है तथा तुम्हे जैसा उचित प्रतीत हो वैसा करो।"

सेनापति बख्त खा ने शहर मे व्यवस्था स्थापित रखने का उत्साह के साथ प्रयास किया था। वह बादशाह के विश्वासपात्र थे। कुछ शहजादो ने बादशाह बहादुरशाह को सेनापति बख्त खा के विरुद्ध भडकाने का प्रयास किया। उन्होने कहा कि सेनापति बरेली से आई हुई सेना के प्रति अधिक सदय है तथा इससे बाकी सेना को कठिनाई का सामना करना पडता है। बादशाह ने उनकी बात सुनने से इकार कर दिया तथा शहजादो की आचार-हीनता के प्रति अपना रोष प्रकट किया। बादशाह बहादुरशाह सेनापति बख्त खा से इतने प्रसन्न थे कि वह दरबार मे उन्हे अपने कान मे बात करने की भी अनुमति दे देते थे। यह बात दरबार के आचरण के नियमो के प्रतिकूल थी तथा इस बात से शहजादे बहुत रुष्ट थे। सेनापति बख्त खा ने शहजादो को प्रसन्न करने के लिए उनके सम्मुख अपने आचरण पर

खेद प्रकट किया। बादशाह ने सेनापति को यह अधिकार दिया कि वह लूट-मार करने वाले लोगो पर जुर्माना लगा सकते हैं तथा लुटे हुए व्यक्तियों की क्षतिपूर्ति करने का उन्हे पूरा अधिकार है। बादशाह ने सेनापति वख्त खा से कहा कि नागरिक प्रशासन को सुव्यवस्थित रखना उनका कर्तव्य है।

सेनापति वख्त खा के दिल्ली पहुचने से पहले, 8 जून को, बादली की सराय मे क्रांतिकारियो और अंग्रेज सेना के बीच युद्ध हुआ। सेनापति बरनार्ड ने क्रांतिकारी सेना को हरा दिया और 'पहाडी' पर अपना अधिकार कर लिया तथा वही पर अपना सैनिक शिविर स्थापित किया। क्रांतिकारी सेना उन पर बार बार आक्रमण कर रही थी परन्तु अंग्रेज सेना 'पहाडी' पर जमी हुई थी। सेनापति वख्त खा से प्रेरित होकर क्रांतिकारियो ने 3 जुलाई को अंग्रेज सेना पर फिर आक्रमण कर दिया। दोनो ओर से धाय धाय गोलिया चल रही थी। अनायास वख्त खा की फौजे पीछे हट गयी। अंग्रेजो ने शांति की सास ली। अंग्रेज सेनाधिकारी नहर के पास, पेडो के नीचे खाना खा रहे थे। खानसामे उन्हे खाना खिला रहे थे। सेनापति चार्ल्स ग्रिफिथ बीयर पी रहे थे। सेनापति वख्त खा की सेना ने उन पर अनायास पुन आक्रमण कर दिया। इस अप्रत्याशित आक्रमण से अंग्रेज घबरा उठे। एक गोला जगलो की ओर से आकर अंग्रेज सेना पर गिरा। बहुत से अंग्रेज सैनिक वही, क्षण उसी धराशायी हो गए। गोलो की आवाज सुनकर हाथी चिघाडते हुए जगलो मे भाग गए। मेजर होम्ब तथा अश्वारोही सेना ने चार्ल्स ग्रिफिथ की सहायता की। उन्होने वख्त खा की सेना पर भीषण गोलाबारी आरभ कर दी। अत मे क्रांतिकारी पीछे हट गये और शहर की तरफ चले गये। अंग्रेजो की बहुत क्षति हुई।

5 जुलाई को जनरल बरनार्ड की हैजे से मृत्यु हो गई। जनरल रीड ने उनका स्थान लिया।

अंग्रेजो की सेना को दिल्ली की दीवारो के नीचे पडे हुए एक महीने से ऊपर हो चुका था। उनकी दिल्ली विजय की आशा निराशा मे बदल चुकी थी। दिल्ली की सेना निरंतर अंग्रेजो से युद्ध लड रही थी। 9 जुलाई को सेनापति वख्त खा की सेना ने अंग्रेजो की सेना पर भारी आक्रमण किया। उनके साथ कुल दस हजार पैदल व अश्वारोही सेना थी। सेनापति वख्त खा की अश्वारोही सेना ने अंग्रेजो की सैन्य-पक्ति पर आक्रमण कर दिया। अंग्रेजो को बहुत हानि हुई तथा उनके बहुत से सैनिक मारे गये। जेहादियो ने भी इस युद्ध मे भाग लिया। उस दिन विजय प्राप्त करने के बाद सैनिक दिल्ली आ गये। कुछ अंग्रेज एक सराय मे छुपे हुए थे। उनके सिरो को काटकर बादशाह के सम्मुख प्रस्तुत किया गया। बादशाह बहुत प्रसन्न हुए तथा जिन सैनिको ने अंग्रेजो को मारा था, उन्हे प्रति सैनिक 100 रुपये का इनाम दिया गया। दो स्वदेशी तोपचियो ने आक्रमण के समय डर कर तोप नही चलाई थी। इन दोनो तोपचियो को गोली से उडा दिया गया। इस पराजय से अंग्रेज बुरी तरह बौखला

गये। उन्होने गुस्से मे आकर अपने ही वफादार, निर्दोष हिन्दुस्तानी कर्मचारियो को मार डाला क्योकि इन गोरे सिपाहियो के दिल मे समस्त एशिया निवासियो के लिए प्रचड घृणा की आग भडक रही थी।

धीरे-धीरे क्रातिकारियो मे अनुशासन की कमी होती गयी। सेनापति बख्त खा योग्य तथा ईमानदार अधिकारी थे परन्तु लोगो मे उनके प्रति ईर्ष्या की भावना पनपती गयी। 2 अगस्त को बादशाह ने शायरी मे कुछ पक्तिया लिखकर सेनापति बख्त खा के पास भेजीं

धर्म के शत्रुओ को मार डालो
फिरगियो का समूल नाश कर दो।
ईद के त्यौहार को फिरगियो के खून से मनाओ।
शत्रुओ को तलवार के घाट उतार दो—छोडो नही।

सेनापति बख्त खा ने उत्तर दिया—वर्षा के कारण चारो ओर बाढ आई हुई है, इसलिए हमारी सेनाए वापस आ गयी हैं।

बादशाह को इस उत्तर से बहुत निराशा हुई। उन्होने निरुत्साहित होकर कहा—"अब हम कभी पहाडी को नही जीत पाएगे"। सध्या के समय सेनापति बख्त खा बादशाह से मिले तथा उन्हे सूचित किया कि सिपाही उनकी आज्ञा का पालन नही कर रहे है। बादशाह ने निराश स्वर मे कहा—"जाओ, उनसे कह दो कि वे शहर छोड दें मुझे पूरा विश्वास है कि अग्रेज दिल्ली पर पुन विजयी होगे तथा मुझे मार डालेंगे।"

सेनापति बख्त खा ने एक बार फिर सपूर्ण उत्साह के साथ अग्रजो को पराजित करने का प्रयत्न किया। 25 अगस्त को सेनापति बख्त खा ने नीमच और बरेली की सेनाओ को साथ लेकर अग्रेजो की सेना के मुख्य स्थान नजफगढ पर आक्रमण कर दिया। सेनापति बख्त खा ने नीमच की सेना को एक विशेष स्थान पर रुकने का आदेश दिया। नीमच की सेना ने उनकी आज्ञा का उल्लघन किया। वे लोग एक गाव मे ठहरे तथा बाकी सेना से अलग हो गये। जनरल निकलसन को यह समाचार मिला। उन्होने नीमच की सेना पर आक्रमण कर दिया, घमासान युद्ध हुआ। नीमच की सेना का एक-एक सिपाही युद्ध मे कट कर मर गया। सेनापति बख्त खा को पीछे हटना पडा। जो सेना सेनापति की आज्ञा का पालन पूर्ण निष्ठा से नही करती, वह कभी विजयी नही हो सकती। इस युद्ध की पराजय से दिल्ली मे निराशा के बादल घिर आये।

धीरे-धीरे अग्रेज सेना की हिम्मत बढ गयी। वह फसील पर चढकर शहर मे कूद पडी। चप्पे-चप्पे के लिए घमासान युद्ध हुआ। अग्रेज सेना के चार-हजार व्यक्ति मारे गये। भारतीय सेना को भी भारी क्षति हुई। अत मे दिल्ली शहर का तीन-चौथाई हिस्सा अग्रेजो के अधिकार मे आ गया। वीर सेनापति बख्त खा ने अब भी आशा नही छोडी। वह बादशाह से स्वय मिलने गये और उनसे कहा—"दिल्ली हाथ से निकल जाने पर भी हमारा

कुछ नही बिगडा। तमाम मुल्क मे आग लगी हुई है। आप अग्रेजो से हार स्वीकार न कीजिए। आप मेरे साथ दिल्ली से निकल चलिए। कई दूसरे स्थान सामरिक दृष्टि से दिल्ली की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है। इनमे से किसी पर भी जमकर हमे युद्ध जारी रखना चाहिए। मुझे विश्वास है कि अत मे हमारी विजय होगी।"

दुर्भाग्यवश मिर्जा इलाहीबख्श अग्रेजो का गुप्त सहायक था। उसने बादशाह को समझाया—"क्रांति के सफल होने की अब कोई आशा नही है। बख्त खा के साथ जाने मे आपको सिवाय कष्टो और हानि के कुछ नही मिलेगा।" मिर्जा इलाहीबख्श ने बादशाह को विश्वास दिला दिया कि अग्रेज उनके तथा उनके परिवार के प्राणो की रक्षा करेंगे। बादशाह बहादुर शाह ने सेनापति बख्त खा को हुमायू के मकबरे मे मिलने को बुलाया था। उन्होने बख्त खा से निम्नलिखित अतिम शब्द कहे—"बहादुर ! मुझे तेरी हर बात का यकीन है और मैं तेरी हर राय को दिल से पसद करता हू। मगर जिस्म की कूवत ने जवाब दे दिया है। मुझको मेरे हाल पर छोड दो और बिस्मिल्लाह करो। यहा से जाओ और कुछ काम करके दिखाओ। मैं नही, मेरे खानदान मे से न सही, तुम या और कोई हिन्दुस्तान की लाज रखे। हमारी फिक्र न करो, अपने फर्ज को अजाम दो।"

सेनापति बख्त खा को गहरी निराशा हुई। वह मकबरे के पूर्वी दरवाजे से बाहर निकल गये। सेनापति बख्त खा दिल्ली से लखनऊ पहुचे वहा पर भी उन्होने क्रांति की ज्वाला को प्रज्वलित रखने का प्रयास किया। 13 मई, 1859 को स्वतत्रता की लडाई लडते-लडते उन्होने वीरगति प्राप्त की। एलेक्जेंडर ल्यूलिन ने अपनी पुस्तक 'सीज आफ दिल्ली' मे लिखा है कि सेनापति बख्त खा मे नेल्सन और रोमेल जैसे व्यक्तिगत गुण थे। एक अग्रेज सेनापति उन्हे इससे बडा क्या सम्मान दे सकता था।

# अमर सिह

राम अनुज जगजान लखन ज्यो उनके सदा सहायी थे।
गोकुल मे बलदाऊ के प्रिय जैसे कुवर कन्हाई थे।
वीर श्रेष्ठ आल्हा के प्यारे ऊदल ज्यो सुखदाई थे।
अमर सिह भी कुवर सिह के वैसे ही प्रिय भाई थे।
कुवर सिह का छोटा भाई वैसा ही मस्ताना था।
सब रहते हैं कुवर सिह भी बडा वीर मर्दाना था।

—मनोरजन प्रताप सिह

अमर सिह, वीर शिरोमणि कुवर सिह के छोटे भाई थे। कुवर सिह की शौर्य गाथाए पढकर आज भी हृदय उत्साह से भर उठता है। कुवर सिह तथा अमर सिह साहिबजादा सिह के पुत्र थे तथा जगदीशपुर मे बिहिया के रहने वाले थे। अमर सिह देखने मे अपने भाई के समान ही लगते थे। क्राति के समय उनकी आयु 45 वर्ष थी। साहस और शौर्य मे भी वह अपने भाई के समान अद्वितीय थे।

बिहार के शाहाबाद जिले मे जगदीशपुर एक छोटी-सी राजपूत रियासत थी। सम्राट शाहजहा ने जगदीशपुर रियासत के मालिक को 'राजा' की उपाधि प्रदान की थी। वह रियासत डलहौजी की अपहरण नीति का शिकार हो चुकी थी। 1857 की क्राति के विस्फोट के समय कुवर सिह जगदीशपुर के राजा थे। वह आसपास के इलाके मे अत्यन्त लोकप्रिय थे और वीरता का अपूर्व उदाहरण थे। उन्होने मिलमैन, लार्ड मार्क और डगलस जैसे विख्यात अग्रेज सेनापतियो को पराजित किया था। जिस समय दानापुर की क्रातिकारी सेना जगदीशपुर पहुची, अस्सी वर्षीय कुवर सिह ने महल से निकल कर शस्त्र उठा लिये और इस सेना का नेतृत्व सभाल लिया। उन्हे जगदीशपुर छोड देना पडा लेकिन वह स्थान-स्थान पर अग्रेजो के विरुद्ध मोर्चा लेते रहे। आठ महीने के उपरात उन्होने फिर से जगदीशपुर मे प्रवेश किया। इन आठ महीनो तक जगदीशपुर अग्रेजो के आधिपत्य मे रहा। इस बीच क्राति का सचालन उनके भाई अमर सिह ने किया। अब जगदीशपुर पर फिर से कुवर सिह का आधिपत्य हो गया। परन्तु युद्ध भूमि मे उनके हाथ पर घाव लग गया था। वह घाव ठीक नही हो सका और 26 अप्रैल, 1858 को वीर कुवर सिह की मृत्यु हो गयी। कुवर सिह के बाद उनके छोटे भाई अमर सिह जगदीशपुर की गद्दी पर बैठे।

अमर सिंह अपने बडे भाई कुवर सिंह का दाहिना हाथ थे । उनके जीवन काल मे वह सदा उनके समकक्ष खडे रहे और उनकी मृत्यु के उपरात भी क्राति की ज्वाला को प्रज्वलित रखा । जिस समय कुवर सिंह अवध के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रो मे लडाई मे व्यस्त थे उन दिनो अमर सिंह बिहार मे क्राति का सचालन कर रहे थे । उन्होने शाहाबाद की क्राति की बागडोर अपने हाथ मे ले ली । वह छापामार युद्ध मे विश्वास रखते थे और निरतर रोहतास की पहाडियो मे छुपे रहते थे तथा उन्होने सासाराम और गया के बीच अग्रेजो के सम्पर्क के सब साधन काट दिये थे । सासाराम तथा गया के बीच आवागमन कठिन हो गया था । पटना के कमिश्नर बक्सर की स्थिति से निराश हो उठे थे । अमर सिंह सासाराम से बारह मील दूर कछावर की ओर चले गये तथा उनके पुन सासाराम लौटने की आशका से अग्रेज कमिश्नर घबरा उठे । उन्होने कलकत्ता तार देकर देहरी के पास ग्राड ट्रक रोड से जाती हुई अग्रेज सेना को रोकने की अनुमति मागी । स्थिति की गम्भीरता को देखते हुए अग्रेज अधिकारियो ने अपने परिवारो को कलकत्ता भेज दिया जिससे वह उनकी सुरक्षा के भार से मुक्त हो जाए । अमर सिंह को पकडने के लिये 2,000 रु० का इनाम घोषित किया गया । बाद मे इनाम की राशि बढाकर 50,001 रु० कर दी गयी । अमर सिंह के सहयोगी निशान सिंह एव हरकृष्ण सिंह को पकडवाने वाले का इनाम क्रमश 1,000 रु० और 500 रु० रखा गया था । अग्रेजो द्वारा अमर सिंह को पकडने के सब प्रयत्न असफल रहे । वह 6 सितबर को ग्राड ट्रक रोड पर कुरेडिया के पास दिखाई दिये और उसके बाद फिर पहाडियो मे छुप गये । उन्होने इस क्षेत्र के भी सचार के सब साधनो को काट दिया था और डाक के घोडे भी अपने साथ ले गये थे । कैमूर की पहाडियो के निकटवर्ती ग्रामो के निवासी अमर सिंह के रहने के गुप्त स्थानो से परिचित थे । परतु उन्होने अमर सिंह से कभी विश्वासघात नही किया । अग्रेज अधिकारी अमर सिंह की गतिविधियो से निरतर चिंतित रहे । अमर सिंह ने कुछ अवधि के लिए सासाराम तथा रोहतास पर भी अपना अधिकार कर लिया था । उन्होने गया तथा आरा पर भी आक्रमण किया । एक वर्ष तक समस्त क्षेत्र मे अशान्ति बनी रही । 28 सितम्बर को लैफ्टिनेंट बेकर ने अमर सिंह के गाव सिरोही पर आक्रमण किया । अमर सिंह गाव मे नही थे । अग्रेजो ने उनके एक जमादार, एक हवलदार तथा दो सिपाहियो को पकड लिया और फासी पर लटका दिया ।

अप्रैल 1858 मे कुवर सिंह फिर शाहाबाद आ गये और इससे स्थिति और भी विकट हो गयी । अमर सिंह की गतिविधियो तथा इस क्षेत्र मे निरतर युद्धरत रहने के कारण अग्रेजो को बहुत अधिक आर्थिक क्षति उठानी पडी । बिहार के इन क्षेत्रो मे अफीम बहुतायत से होती थी । चारो ओर फैली हुई अराजकता के कारण अफीम की खेती नही हो सकी । अग्रेजो को कर के रूप मे मिलने वाली राशि मे बेहद हानि हुई ।

अग्रेज अधिकारी समय-समय पर कुवर सिंह तथा अमर सिंह से प्रतिशोध लेते रहते थे ।

कुवर सिंह की मृत्यु 26 अप्रैल, 1858 को हो गई। अब अमर सिंह ने प्रशासन तथा सेना की वागडोर अपने हाथ मे ले ली। अमर सिंह को वीरता का गुण पैतृक विरासत मे मिला था तथा उनकी इच्छा-शक्ति अभूतपूर्व थी। उनकी प्रजा को उनमे अगाध विश्वास था। वडे वडे पुरस्कारो के लालच ने भी उन्हे कभी विश्वासघात की ओर प्रेरित नही किया। कुवर सिंह की मृत्यु के उपरात विहार मे क्राति की चिनगारी बुझी नही—उसी प्रकार निरतर जलती रही।

अमर सिंह ने शाहावाद मे समानान्तर सरकार की स्थापना की। उन्होने अपने न्यायाधीश तथा प्रशासकीय अधिकारी नियुक्त किये। उन्होने एक वदीगृह का निर्माण किया था। अग्रेजो ने अमर सिंह के पकडवाने के लिए इनाम घोषित किया था। अमर सिंह ने उच्च अग्रेज अधिकारियो के सिर पर इनाम घोषित कर दिया। जिन लोगो ने राज्य कर नही दिया था, उनकी सपत्ति को वेचकर, प्रशासकीय आवश्यकताओ की पूर्ति की गयी। अमर सिंह के शासन प्रवध मे प्रत्येक व्यक्ति को न्याय मिलता था।

कुछ समय पूर्व अमर सिंह के विषय मे महत्वपूर्ण कागजात मिले है जिनसे उनके काय पर समुचित प्रकाश पडता है।

कुवर सिंह की मृत्यु के उपरात अमर सिंह को वहुत-सी कठिनाइयो से जूझना पडा था। वह चार दिन के लिए भी आराम से नही बैठे। अमर सिंह केवल जगदीशपुर की रियासत पर अधिकार जमाये रखने से सतुष्ट नही थे। उनकी महत्वाकाक्षाए और भी थी। अमर सिंह को दवाने के लिए अग्रेजो की तीन सैनिक पलटने आरा पहुची। अग्रेजो की सेना के साथ उस क्षेत्र मे अमर सिंह के कई युद्ध हुए। 3 मई को राजा अमर सिंह की सेना के साथ जनरल डगलस और लगर्ड की सेनाओ का पहला युद्ध हुआ। इसके वाद विहिया, हातमपुर, दलीलपुर इत्यादि अनेक स्थानो पर दोनो सेनाओ मे अनेक सग्राम हुए। अमर सिंह को मालूम था कि युद्ध मे अग्रेजो पर विजय प्राप्त करना कठिन है। उन्होने छापामार युद्ध द्वारा अग्रेजो को नाको चने चववा दिये। अमर सिंह की सेना कही भी किसी भी समय प्रकट हो जाती थी और शत्रु के सचार और रसद के सव साधनो को काट देती थी। जनरल लगड ने जगल मे से सडक निकालकर क्रातिकारियो को पकडने का प्रयास किया। अमर सिंह की सेना और भी छोटी-छोटी टुकडियो मे विभक्त हो गयी और छापामार युद्ध से अग्रेज सेनापति को परेशान कर दिया। जनरल लगड ने निराश होकर त्यागपत्र दे दिया। लगर्ड का भार अव जनरल डगलस पर पडा।

डगलस ने अमर सिंह को परास्त करने की प्रतिज्ञा की थी। जून, जुलाई, अगस्त, सितम्वर के महीने वीत गये परन्तु अमर सिंह परास्त नही हो सके। अमर सिंह ने आरा पर आक्रमण किया और जगदीशपुर पर अपना आधिपत्य वनाये रखा। अमर सिंह ने आरा पर जुलाई मे प्रथम वार आक्रमण किया और रेलवे के एक अग्रेज अधिकारी के वगले को जला दिया। अगले



भगत सिंह को गोरखपुर जेल में रखा गया।

महीने उन्होने फिर आरा पर आक्रमण किया। कर्नल वाल्टर ने उनका पीछा किया परन्तु वह रात्रि के अधकार मे गायब हो गये। अगेज आरा की रक्षा करने मे सफल रहे। अगले दिन क्रातिकारी फिर से आरा मे प्रकट हुए। लौटते समय अमर सिंह गया पहुचे और रास्ते मे जमेरा के जमीदार चौधरी प्रताप सिंह का घर जला दिया क्योकि वह अग्रेजो का साथ दे रहे थे।

अब अग्रेजो की विशाल सेना ने कई तरफ से जगदीशपुर पर आक्रमण कर दिया। 17 अक्तूबर को अग्रजी सेना ने जगदीशपुर को चारो ओर से घेर लिया। अमर सिंह ने जब देख लिया कि अब अग्रेजो के विशाल सैन्य दल पर विजय प्राप्त करना असभव है, वह अपने घोडे पर बैठकर सिपाहियो के साथ अग्रेजी सेना को चीरते हुए वहा से निकल गये। जगदीशपुर अग्रेजो के हाथ आ गया, अब अमर सिंह ने लटाबरपुर को अपना गढ बना लिया।

अग्रेज सेनापति अमर सिंह से सदैव भयभीत रहते थे। कुछ अग्रेज अधिकारियो का विचार था कि अमर सिंह अवध की ओर जाना चाहते थे। गाजीपुर के मजिस्ट्रेट के अनुसार अमर सिंह गाजीपुर पर आक्रमण करना चाहते थे तथा एक अन्य अग्रेज अधिकारी का अनुमान था कि अमर सिंह बनारस पर आक्रमण करेगे। डगलस ने उन जगलो को जिनमे अमर सिंह छिपे हुए थे, चारो ओर से घेर लिया। सेना की कई टुकडिया जगल मे घुसी। क्रातिकारियो की सेना जगल के चप्पे-चप्पे से परिचित थी। वे लोग आसानी से निकलकर भाग गये। अग्रेज सेनापति को फिर निराश होना पडा। अग्रेज सेना अमर सिंह का पीछा करती रही। उन्होने 19 अक्तूबर को नौमदी नामक गाव के निकट अमर सिंह का घेर लिया। अमर सिंह के साथ केवल चार सौ सिपाही थे। इन सिपाहियो ने अग्रेज सेना को पीछे खदेड दिया। इतने ही मे अग्रेज सेना को मदद पहुच गई। अमर सिंह अपने कुछ साथियो के साथ रण-क्षेत्र से निकल गये। बाकी सैनिको ने लडते लडते अपने प्राण मातृभूमि के चरणो मे अर्पित कर दिये। कपनी की सेना अमर सिंह का पीछा करती रही। कहा जाता है कि एक बार अग्रेज सेना अमर सिंह के हाथी तक पहुच गयी। अमर सिंह कूदकर निकल भागे और अग्रेजो के हाथ केवल हाथी ही लगा। वहा से अमर सिंह ने कैमूर की पहाडियो मे शरण ली। जनरल डगलस ने अमर सिंह पर वहा भी आक्रमण किया। अमर सिंह की समस्त सेना अस्त व्यस्त हो गई थी। उनके दो प्रमुख सहयोगियो—निशान सिंह तथा हरकृष्ण सिंह को अग्रेजो ने फासी पर लटका दिया था परन्तु वे अमर सिंह को पकडने मे अब भी असमर्थ रहे। क्रातिकारी बार बार पराजित हुए परन्तु उन्होने फिर भी पराजय स्वीकार नही की। लडाई निरतर चलती रही।

अमर सिंह क्राति को जीवित रखने के लिए इधर से उधर भटकते रहे। 1859 मे कर्नल रैमजे को सूचना मिली कि अमर सिंह नेपाल की तराई मे पहुच गये है और उन्होने नाना साहब की क्रातिकारी सेनाओ के सेनापतित्व का भार सभाल लिया है। अत मे दिसम्बर 1859 मे नेपाल के राणा जगबहादुर की सेना अमर सिंह को पकडने मे सफल रही। अमर सिंह को

गोरखपुर जेल मे रखा गया। उत्तर पश्चिम प्रान्त की सरकार ने बगाल सरकार से पूछा कि अमर सिह पर मुकदमा गोरखपुर मे चलाना उपयुक्त रहेगा अथवा शाहाबाद मे। बगाल सरकार ने उत्तर दिया—"अमर सिह पर शाहाबाद मे मुकदमा चलाना ठीक आदर्श उपस्थित करेगा।" यह वाद विवाद चल ही रहा था कि अमर सिह को पेचिश हो गई। मुकदमे से पहले ही काल का बुलावा आ गया और उन्होने 5 फरवरी, 1860 को गोरखपुर जेल मे प्राण त्याग दिये। अमर सिह दृढ इच्छा शक्ति और वीरता से अग्रेजो के विरुद्ध अविराम लडते रहे और वह हार कर भी नही हारे।

# रानी द्रौपदी बाई

रानी द्रौपदी बाई जैसी वीरांगनाओं ने देश के इतिहास के पृष्ठों को उज्ज्वल कर दिया है। वह धार क्षेत्र में अंग्रेजों के विरुद्ध क्रांति की आत्मा थी।

धार मध्यभारत में एक छोटा-सा राज्य था जिसका क्षेत्रफल लगभग 2,500 वर्गमील था। राज्य की राजधानी का नाम भी धार था।

22 मई, 1857 को धार के राजा की हैजे से मृत्यु हो गयी। मृत्यु की पूर्व संध्या को उन्होंने अपने छोटे भाई आनन्दराव बालासाहब को गोद ले लिया। उस समय आनन्दराव बालासाहब की आयु तेरह वर्ष थी। राज्य कार्य को सुचारु रूप से चलाने के लिए भूतपूर्व महाराजा की बड़ी रानी द्रौपदी बाई ने अपने को अल्पवयस्क राजा का प्रति संरक्षक घोषित कर दिया। 28 सितम्बर, 1857 को अंग्रेज सरकार ने अल्पवयस्क आनन्दराव बालासाहब को धार का राजा स्वीकार कर लिया। इतिहासकारों का मत है कि डलहौजी ने भारतीय राजाओं को गोद लेने के अधिकार से वंचित कर दिया था, इसलिए असंतुष्ट राजाओं और ताल्लुकेदारों ने अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध में भाग लिया। धार राज्य में स्थिति बिल्कुल विपरीत थी। अल्पवयस्क राजा को अंग्रेजों ने स्वीकार कर लिया था परन्तु फिर भी रानी द्रौपदी बाई ने धार में अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध की प्रेरणा दी। रानी द्रौपदी बाई के राज्य-संरक्षण के कार्य-भार को संभालते ही समस्त प्रदेश में क्रांति की लपटें प्रचंड रूप से फैल गईं।

रानी द्रौपदी बाई ने रामचन्द्र बापूजी को अपना दीवान नियुक्त किया। अधिकारियों को विश्वास था कि धार का राजदरबार उनका सहयोगी सिद्ध होगा। उनकी आशा के विपरीत धार की राजमाता द्रौपदी बाई तथा दीवान बापूजी ने उनके विरुद्ध विद्रोह का झंडा खड़ा कर दिया। राज्य-भार संभालते ही उन्होंने अपनी सेना में अरब-अफगान और मकरानियों को नियुक्त करना आरम्भ कर दिया। अंग्रेज देशी राज्यों में वेतन भोगी सैनिकों की नियुक्ति के विरुद्ध थे। रानी द्रौपदी बाई ने उनकी इच्छा अथवा अनिच्छा की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। रानी के भाई भीमराव भोसले भी अंग्रेजों के विरुद्ध थे। नवनियुक्ति हुए धार के सैनिकों को इंदौर में विद्रोह की सूचना मिली। उसी समय धार के सैनिकों ने अमझेरा राज्य के सैनिकों के साथ मिलकर सरदारपुर पर आक्रमण कर दिया। वे लोग लूट के सामान को साथ लेकर धार लौट आए। रानी द्रौपदी बाई के भाई भीमराव ने उनका स्वागत किया। वे लोग लूट के

माल के साथ तीन तोपें भी लाये थे। रानी द्रौपदी बाई ने इन तोपो को राजमहल मे रखवा दिया।

31 अगस्त, 1857 को धार के किले पर क्रातिकारी सेनानियो का अधिकार हो गया। कहा जाता है कि किले पर अधिकार प्राप्त करने मे क्रातिकारी सेनानियो को रानी द्रौपदी बाई एव राजदरबार का समर्थन प्राप्त था। अग्रेज कनल ड्यूरेंड ने राजमाता द्रौपदी बाई एव राजदरबार के अन्य सदस्यो को कडी चेतावनी देते हुए पत्र लिखा कि आगे जो भी कडा कदम उठाया जाएगा, उसके लिए वे लोग स्वय ही उत्तरदायी होंगे।

धार की राजमाता द्रौपदी बाई एव राजदरबार द्वारा विद्रोह को प्रेरणा दिये जाने के कारण कनल ड्यूरेंड बहुत चिंतित हो उठे। उनके पास हैदराबाद, नागपुर, सूरत, उज्जैन एव ग्वालियर जैसे दूरवर्ती स्थानो से समाचार आ रहे थे कि दशहरे के उपरान्त समस्त मालवा क्षेत्र मे क्राति की लपटे फैल जाएगी। हैदराबाद और नागपुर से कुछ प्रभावशाली व्यक्तियों के मालवा पहुचने की सभावना थी। नाना साहब उसी क्षेत्र मे मडरा रहे थे। स्थिति किसी भी समय विस्फोटक हो सकती थी। उन्होने 12 अक्तूबर, 1857 को अपनी कुछ सेना मदसौर की ओर भेजी तथा शेष सेना के साथ 19 अक्तूबर, 1857 को धार की ओर कूच कर दिया।

जुलाई 1857 से अक्तूबर 1857 तक धार के किले पर क्रातिकारियो का अधिकार रहा। 2 सितम्बर, 1857 को रानी द्रौपदी बाई और क्रातिकारियो के बीच एक समझौता हो गया। क्रातिकारी नेता गुलखान, बादशाह खान, सादत खान स्वय रानी द्रौपदी बाई के दरबार मे आए। अब वे बहुत शक्तिशाली हो गये थे। धार का किला अब भी क्रातिकारियो के अधिकार मे था। वे अग्रजो की डाक लूट लेते थे। उन्होने अग्रेजो के कई डाक बगले जला दिये थे। अग्रेज अधिकारियो का जीवन बहुत कठिन हो गया था।

अग्रेज सेना 22 अक्तूबर, 1957 को धार पहुच गयी। क्रातिकारियो को अपनी सफलता पर पूर्ण विश्वास था। अग्रेज सेना ने धार के किले को चारो ओर से घेर लिया। धार का किला शहर से बिल्कुल बाहर स्थित था। यह किला मैदान से तीस फुट की ऊचाई पर लाल पत्थर से बना हुआ था। किले के चारो ओर 14 गोल तथा दो चौकोर बुर्ज बने हुए थे। अग्रेज सेनाधिकारी को विश्वास था कि क्रातिकारी शीघ्र ही आत्म-समर्पण कर देंगे। किन्तु अरब और मकरानी सेनानियो ने अगाध विश्वास और वीरता का परिचय दिया। किले का घेरा 24 से 30 अक्तूबर, 1857 तक चलता रहा। क्रातिकारियो ने किले के दक्षिण की ओर, पहाडी पर तीन पीतल की तोपें लगा रखी थी। अग्रेज सेना किले पर निरन्तर गोलाबारी कर रही थी। क्रातिकारी सेनानियो ने रानी द्रौपदी बाई व राजदरबार के नाम पर बाहरी राज्यो से सहायता प्राप्त करने का भी प्रयास किया। अन्त मे किले की दीवार मे दरार पड गयी। यह दरार चौडी होती चली गयी और अग्रेज सेना किले के अन्दर घुस आयी। क्रातिकारी सैनिक गुप्त रास्ते से बच कर निकल गये। धार के किले की दीवारो पर गोलो के

निशान तथा क्रांतिकारियो द्वारा प्रयोग मे लाया गया गुप्त रास्ता आज भी देखा जा सकता है।

कर्नल ड्यूरेंड ने अधिकार प्राप्त करने के उपरात धार के किले को तहस-नहस कर दिया। धार राज्य को जब्त कर लिया गया। दीवान रामचन्द्र बापूजी तथा अन्य क्रान्तिकारी नेताओं को बदी बना कर मण्डलेश्वर कारागृह मे भेज दिया गया। फरवरी 1858 मे धार राज्य को जब्त करने के निश्चय का पुष्टीकरण कर दिया गया। इस विषय को लेकर ब्रिटिश पार्लियामेट मे बहुत शोर मचा। 1860 मे धार का राज्य पुन अल्पवयस्क राजा को वयस्कता प्राप्त करने पर सौंप दिया गया। उस समय भी धार के राजा को बरछा जिला नही दिया गया। स्वामी-भक्ति के इनाम के रूप मे यह जिला इन्दौर के होल्कर को दे दिया गया।

रानी द्रौपदी बाई के नाम से बहुत कम लोग परिचित हैं परन्तु इतिहास के पृष्ठो मे उनका नाम जगमगाते हुए नक्षत्र की भाति है।

# राजा अर्जुन सिंह

पोरहट के राजा अर्जुन सिंह का पूर्वी-भारत की क्रांति मे कुवर सिंह के बाद सबसे महत्वपूर्ण स्थान है।

राजा अर्जुन सिंह के नेतृत्व मे विहार मे सिंहभूम के कोल जाति के लोग अग्रेजो के विरुद्ध उठ खड़े हुए थे। उनके विद्रोह को दबाने मे अग्रेजो के छक्के छूट गये। रांची के निकट छवीसा मे क्रांतिकारी एकत्रित हो रहे थे। अपने नेतृत्व के लिए उन्हे पोरहट के राजा अर्जुन सिंह सबसे उपयुक्त लगे। छोटा नागपुर के तत्कालीन कमिश्नर डेल्टन ने लिखा है--"राजा अर्जुन सिंह का उत्तेजनाशील कोल जाति पर विशेष प्रभाव है। दक्षिण की कुछ दुदम जातिया उन्हे भगवान की भांति मानती है। उनकी योग्यता, दूरदर्शिता तथा न्याय-प्रियता ने उन्हे कोल जाति का स्वाभाविक नेता बना दिया है।"

छवीसा मे क्रांति के लिए लोगो मे उत्साह था। वहा के कुछ क्रांतिकारी लोगो को राजसत्ता विरोधी शिक्षा दे रहे थे तथा उनके हृदय मे क्रांति की भावना कूट-कूट कर भर रहे थे। वह बार-बार लोगो को समझा रहे थे कि अग्रेजो ने देश छोड दिया है और उस पर राजा अर्जुन सिंह का अधिकार है। उन्होने कोल जाति को हथियार उठाने के लिए आमन्त्रित किया तथा चक्रधरपुर मे मनकी और मुडा लोगो को बुलाया और राजा अर्जुन सिंह के प्रति वफादार रहने की शपथ ली।

क्रांतिकारियो ने राजा अर्जुन सिंह को सिंहभूम का राजा मान लिया था परन्तु आरभ मे उन्होने अग्रेजो के विरुद्ध युद्ध मे पूर्ण मन से भाग नही लिया। उनके मन मे बराबर दुविधा बनी रही। बाद मे अग्रेजो के दुर्व्यवहार ने उनकी आखे खोल दी और वह पूर्ण जोश के साथ क्रांति मे कूद पडे।

छवीसा मे अगस्त 1857 मे क्रांति का आरभ हुआ। उस समय कैप्टन सीसमोर छवीसा मे असिस्टेंट कमिश्नर थे। क्रांति का आरभ होते ही वह डर कर अपने परिवार सहित कलकत्ता भाग गये। उन्होने सिंहभूम का शासन प्रबन्ध सरायकेला के राजा के अधिकार मे छोड दिया। सरायकेला के राजा पोरहट के राजा अर्जुन सिंह से नीची श्रेणी के राजा थे तथा दोनो के आपसी सबध भी अच्छे नही थे। राजा अर्जुन सिंह अग्रेजो की इस बात से क्षुब्ध हो गये। राजा अर्जुन सिंह के भाई बैजनाथ सिंह तथा दीवान जग्ग उन्हे क्रांति मे भाग

लेने के लिए बार-बार उत्साहित कर रहे थे। उन्होने अंग्रेजो के विरोध के लिए सैनिक तैयारी भी कर ली थी। 3 सितम्बर को छवीसा मे सिपाहियो ने विद्रोह कर दिया। वह अपने साथ खजाना लेकर राची की ओर बढ रहे थे। रास्ते मे उन्ह छबीसा के पश्चिम मे सगाई नदी के पास 500-600 कोल लोगो ने घेर लिया। कोल लोग उन्हे वहा से राजा अर्जुन सिंह की अनुमति के विना आगे नही बढने दे रहे थे। अत मे कोल लोग राजा अर्जुन सिंह के पास सिपाहियो और खजाने को लेकर चक्रधरपुर पहुचे तथा उन्होने खजाना तथा सिपाही राजा अर्जुन सिंह को सौप दिये।

16 सितम्बर को लेफ्टिनेंट वर्च छवीसा के असिस्टेंट कमिश्नर नियुक्त हुए। राजा अर्जुनसिंह इस समय तक भी अंग्रेजो के विरुद्ध नही थे। उन्होने राची के कमिश्नर डेल्टन से कहा कि वह छवीसा से लूटा हुआ खजाना तथा सिपाही उन्हे सौंपने को तैयार है। वह 11 अक्तूबर को राची गये तथा छवीसा के 100 क्रातिकारी सिपाही, सैन्य सामग्री तथा 19,578 79 रु० अंग्रेजो के सुपुर्द कर आए। उन्होने लेफ्टिनेंट वर्च से भी मैत्री सबध स्थापित करने का प्रयास किया परन्तु अंग्रेज अधिकारियो ने उनकी स्वामीभक्ति से प्रभावित होने के स्थान पर उन्हे देशद्रोही घोषित कर दिया। कमिश्नर डेल्टन ने उनसे कहा कि उन्हे लेफ्टिनेंट वच के सम्मुख अपने मुकदमे के लिए उपस्थित होना चाहिए। दीवान जग्गू को भी राजद्रोही घोषित किया गया। राजा अर्जुन सिंह की सारी जमीन-जायदाद जब्त कर ली गई और उन्हे पकडवाने के लिए इनाम भी घोषित किया गया। सितम्बर मे लेफ्टिनेंट कमिश्नर वच ने सरायकेला के राजा की सहायता से छवीसा पर पुन अधिकार प्राप्त कर लिया। राजा अर्जुन सिंह ने असिस्टेंट कमिश्नर वर्च के सम्मुख अभी तक आत्म समर्पण नही किया था। अंग्रेज अधिकारियो को लगा कि यह सत्ता के प्रति सम्मान की कमी का द्योतक है। राजा अर्जुन सिंह को कमिश्नर के सम्मुख उपस्थित होने की आज्ञा दी गयी। इसी बीच जग्गू दीवान ने चक्रधरपुर मे अंग्रेजो को हरा दिया था परतु तीन दिन बाद ही 20 अक्तूबर को असिस्टेंट कमिश्नर ने चक्रधरपुर पर आक्रमण कर दिया तथा शहर पर पुन अधिकार स्थापित कर लिया। जग्गू दीवान को पकड लिया गया और फासी पर लटका दिया गया। अगले दिन अंग्रेजो ने राजा अर्जुन सिंह के महल पर भी आक्रमण किया। राजा यहा से निकल कर भाग गये परतु अंग्रेजो ने आस-पास के गावो मे भारी लूट-मार की और कई गावो को जला दिया।

अंग्रेजो के दुर्व्यवहार से राजा अर्जुन सिंह के मन मे क्रोध भडक उठा। सिंहभूम लौटने पर उन्हे पता चला कि उनके बच्चे की मृत्यु हो गयी है। बच्चे से उन्हे बहुत स्नेह था। उन्हे लगा कि छवीसा के क्रातिकारी सिपाहियो तथा खजाने को अंग्रेजो को सौपने के पाप के फल-स्वरूप ही बच्चे की अकाल मृत्यु हुई है। उनका मन पश्चाताप से भर उठा। अब वह पूर्ण रूप से अंग्रेजो के विरुद्ध हो गये। उन्होने अपने परिवार को चक्रधरपुर से पोरहट भेज दिया



राजा अर्जुन सिंह के ससुर ने उन्हें अंग्रेजों के हवाले कर दिया।

तथा अंग्रेजो से मिलने से इकार कर दिया और भावी युद्ध के लिए तैयारी आरभ कर दी। राजा के आदेश के अनुसार बहुत से लुहार गोली और सैन्य सामग्री बनाने मे जुट गये। सिंहभूम मे क्रांति का शखनाद बज उठा। राजा अर्जुन सिंह ने अपना तीर कोल लोगो के मध्य घुमाया जिसका तात्पर्य था कि वह लडाई के लिए तत्पर है। कोल जाति पर राजा अर्जुन सिंह का प्रभाव था। वह उनके सकेत मात्र पर लडाई मे कूद पडने के लिए तैयार थे। छंगीसा के बाजार मे चारो ओर यह नारा गूजता था

"प्रत्येक वस्तु ईश्वर की है, देश राजा का है और उस देश का राजा अर्जुन सिंह है।" कोल लोगो ने सर्वप्रथम उन व्यक्तियो से अपना प्रतिशोध लिया जो राजा अर्जुन सिंह के विरुद्ध अंग्रेजो के साथी थे तथा जिन्होने अंग्रेजो की चक्रधरपुर के आक्रमण के समय सहायता की थी। केरा के ठाकुर ने भी अंग्रेजो का साथ दिया था, उससे भी बदला लेना था। राजा अर्जुन सिंह के सहयोगियो ने ठाकुर के महल पर आक्रमण कर दिया, वहा लूट-मार की तथा सारी सम्पत्ति को जलाकर राख कर दिया। उन्होने जयतगढ के पुलिस स्टेशन को तहस नहस कर दिया। यह इस बात का सकेत था कि दक्षिणी कोल्हान मे क्रांति की ज्वाला धधक उठी है। 14 जनवरी, 1858 के दिन, उस क्षेत्र के विशेष कमिश्नर लुशिंग्टन को मोगरा नदी के पास, एक सूखे नाले के निकट, कोल लोगो ने घेर लिया। उनकी सख्या लगभग तीन चार हजार थी। अंग्रेजो की सेना बारबीर नामक स्थान पर आक्रमण करने जा रही थी। कोल लोगो ने उन पर लगातार तीर बरसाये। कोई भी अंग्रेज सैनिक अधिकारी घायल हुए बिना नही रहा। वे लोग बडी कठिनाई से छंगीसा पहुच पाए। चक्रधरपुर मे ब्रिटिश एजेंट तथा सरायकेला के राजा भी कोल लोगो से हार गये। समस्त सिंहभूम मे क्रांति की चिनगारी फैल गयी और अंग्रेज सेना उस क्षेत्र मे लुप्तप्राय हो गयी। कितनी ही बार अंग्रेज और कोल क्रांतिकारियो मे मुठभेड हुई। कोल बार बार अंग्रेज सेना पर आक्रमण करते थे और उन्हे पीछे की ओर खदेड देते थे। अंग्रेजो की 9 फरवरी की घोषणा के अनुसार राजा अर्जुन सिंह की रियासत तथा भू-सपत्ति जब्त कर ली गयी थी। अंग्रेज प्रजा को अपनी ओर मिलाना चाहते थे। इसलिए राजा अर्जुन सिंह प्रजा से जितना भूमि कर लेते थे उसे अंग्रेज अधिकारियो ने घटा दिया। परन्तु इससे भी परिस्थिति मे कोई अतर नही पडा। विद्रोह मे उग्रता उसी प्रकार बनी रही। चक्रधरपुर मे कुछ अंग्रेज रहते थे, अर्जुन सिंह ने अपने सेनानियो के साथ वहा पर आक्रमण कर दिया। उन्होने तीन ओर से अंग्रेजो की छावनी को घेर लिया परन्तु उन्हे पीछे हटना पडा। क्रांतिकारियो ने चक्रधरपुर पर दूसरा आक्रमण 10 जून, 1858 को किया। राजा अर्जुन सिंह ने अपनी सेना को जुमरु के पास एकत्रित होने का आदेश दिया। विप्लवकारियो की सेना बहुत बडी थी। समस्त चक्रधरपुर को हथियारबद कोल लोगो ने घेर लिया था परतु वे लोग हार गये तथा उन्हे जुमरु से पीछे हटना पडा। अंग्रेजो ने राजा अर्जुन सिंह के साथ शाति स्थापित करने का प्रयास किया। उन्होने कहा कि यदि राजा अर्जुन सिंह आत्म-समर्पण करेंगे तो उनके

सम्मान को किसी प्रकार का भी धक्का नही लगेगा तथा उन्हे प्राणदान दिया जाएगा। परन्तु क्रातिकारी राजा पर इस बात का कोई प्रभाव नही पडा।

चक्रधरपुर से पीछे हटने के बाद क्रातिकारी कोल पोरहट चले गये। वे लोग समय-समय पर अंग्रेज सेना पर आक्रमण करते रहते थे। कभी रात्रि मे आक्रमण करते थे कभी छुपकर दिन मे। वे छापामार युद्ध मे विश्वास रखते थे और अंग्रेज उनसे आतंकित थे। इसी समय राजा बजनाथ सिंह ने आनदपुर पर आक्रमण किया और वहा के जमीदार को हरा दिया। आनदपुर का जमीदार अग्रेजो के हाथ की कठपुतली था। अग्रेजो ने क्रातिकारियो के रसद प्राप्त करने के सब साधन बद कर दिये थे। इस आक्रमण के द्वारा उन्हे सेना के उपभोग की आवश्यक वस्तुए प्राप्त हो गयी। लेफ्टिनेंट बच ने 29 जनवरी को कोरडीहम पर आक्रमण किया। इस युद्ध मे अग्रेज विजयी हुए। उन्हे बहुत सी सैन्य सामग्री तथा धन मिला परन्तु राजा अर्जुन सिंह बचकर भाग गये। अत मे अंग्रेजो ने एक दूसरा उपाय सोचा। उन्होने राजा अर्जुन सिंह के ससुर राजा मयूरभज पर प्रभाव डाला कि वह राजा अर्जुन सिंह को आत्मसमर्पण के लिए प्रेरित करें। इस समय तक अर्जुन सिंह निराश हो चुके थे तथा वह सबलपुर के क्रातिकारियो के पास शरण लेना चाहते थे परन्तु उनका अब भी आत्मसमर्पण का कोई विचार नही था। लेफ्टिनेंट बच ने राजा अर्जुनसिंह को सब ओर से घेर रखा था। डेढ साल तक लगातार अंग्रेजो से लडते रहने के उपरात उन्होने 15 फरवरी, 1859 को स्वय को अपने ससुर राजा मयूरभज को सौप दिया जिन्होने राजा अर्जुन सिंह को अंग्रेजो के हवाले कर दिया। राजा के आत्मसमर्पण के उपरात भी उनके साथियो ने सिंहभूम मे क्राति की ज्वाला को प्रज्वलित रखा।

# खान बहादुर खां

1857 मे क्राति की ज्वाला ने समूचे भारतवष को झकझोर दिया था। उस समय खान बहादुर खा रुहेलखड क्षेत्र के महान क्रातिकारी नेता थे। वह केवल क्राति के सूत्रधार ही नही थे बल्कि कुछ समय के लिए उन्होंने समस्त रुहेलखड क्षेत्र मे स्वतत्र शासन की स्थापना की थी।

बरेली, रुहेलखड क्षेत्र की राजधानी थी। खान बहादुर खा बरेली के निवासी थे। अग्रेजो के प्रति विद्रोह की भावना खान बहादुर खा के रक्त मे थी। उनके पिता का नाम हाफिज नेमतउल्लाह खान था। सरदार रहमत खा रहेलखड के अतिम स्वतन रुहेला शासक थे तथा उनके वशज होने के कारण खान बहादुर खा को सौ रुपये मासिक पेंशन मिलती थी। वह अग्रेजो के द्वारा न्यायाधीश के पद पर भी नियुक्त किये गए थे। उनका जीवन आराम से बीत रहा था तथा उन्हे सुख-सुविधाओ के सब साधन उपलब्ध थे। परन्तु उनके मन मे अग्रेजो के अन्यायपूर्ण शासन के प्रति गहरा आक्रोश था। 1857 की क्राति के समय उनकी आयु लगभग सत्तर-अस्सी वर्ष की थी। उनकी दाढी लम्बी और सफेद थी। कद लम्बा तथा आखे बडी-बडी और रग गोरा था। आयु का आधिक्य हृदय मे क्राति की ज्वाला को प्रज्वलित होने से रोक नही सका। वयोवृद्ध नेता अपूर्व उत्साह के साथ स्वतनता सग्राम मे कूद पडे।

क्राति का आरम्भ मेरठ से हुआ तथा शीघ्र ही दिल्ली मे भी स्वतनता का हरा झडा फहराने लगा। बहादुरशाह जफर को दिल्ली का स्वतत्र शासक घोषित कर दिया गया। दिल्ली की स्वाधीनता का समाचार समस्त देश मे बिजली की भाति फैल गया और अलीगढ, इटावा, मैनपुरी और नसीराबाद भी स्वतत्र हो गये।

31 मई का दिन देश भर मे क्राति के लिए निर्धारित किया गया था। खान बहादुर खा ने पूव योजना के अनुसार 31 मई तक प्रतीक्षा करने का निश्चय किया। उनका अग्रेजो के साथ इतना सुन्दर व्यवहार था कि किसी को कोई सन्देह नही हो सका। ठीक 31 मई को प्रात काल ब्राउनली का बगला जला दिया गया। ग्यारह बजे दोपहर को एक तोप छूटी। यह क्राति का आरम्भ था। 68 न० पलटन ने अग्रेजो के बगले मे आग लगा दी और उन्हे मारना आरम्भ कर दिया। अग्रेज नैनीताल की तरफ भाग निकले। 6 घटे के अन्दर बरेली पर स्वाधीनता का हरा झडा फहराने लगा। खान बहादुर खा को सर्वसम्मति से दिल्ली के बादशाह



न्यायालय ने खान बहादुर खां को फांसी की सजा दी।

बहादुरशाह जफर के अधीन रुहेलखड का शासक घोषित कर दिया गया। बख्त खा ने क्रांतिकारी सेनाओ का सेनापतित्व स्वीकार किया। दो दिन के अन्दर-अन्दर शाहजहापुर, मुरादाबाद और बदायू भी स्वाधीन हो गये। समस्त रुहेलखड पर खान बहादुर खा का शासन स्थापित हो गया।

खान बहादुर खा ने समस्त प्रदेश मे शान्ति, व्यवस्था तथा सुशासन स्थापित करने का प्रयत्न किया। क्रांति के कारण सब दुकाने बद थी और जीवन अस्त व्यस्त हो गया था। खान बहादुर खा ने आदेश दिया कि सब दुकानो को खोल दिया जाए। एक जून, 1857 को प्रात काल खान बहादुर खा ने सब कर्मचारियो को कोतवाली मे उपस्थित होने का आदेश दिया। उन्होंने कहा कि सब राजकीय अधिकारी अपने-अपने स्थानो पर पूर्ववत् कार्य करते रहेंगे और यदि किसी कर्मचारी ने अपने कर्त्तव्य का उल्लघन किया तो उसे कठोर दड दिया जाएगा।

21 जून को खान बहादुर खा को दिल्ली से एक शाही फरमान प्राप्त हुआ जिसके अनुसार उन्हे रुहेलखड का शासक नियुक्त किया गया तथा सम्पूर्ण प्रशासकीय अधिकार प्रदान किये गये। शाही फरमान के अनुसार प्रशासन का ध्येय कृषि की उन्नति करना, राज्य-कर ठीक समय पर उपलब्ध करना और सेना को ठीक समय पर वेतन देना था। शाही फरमान की प्रतिया समस्त तहसीलो, थानो और कोतवालियो मे भेज दी गईं।

खान बहादुर खा ने बख्त खा की अध्यक्षता मे एक बहुत बडी सेना क्रांतिकारियो की सहायता के लिए दिल्ली भेज दी थी। अब सेना को सगठित करने की आवश्यकता थी। उन्होंने सैन्यशक्ति को बढाने का प्रयत्न किया तथा बहुत से नये सैनिक नियुक्त किये।

वह भली-भाति समझते थे कि अग्रेजो से खुले मैदान में युद्ध करना सम्भव नही है क्योंकि उनके पास अपार सैन्य बल है। उनके साथ छापामार युद्ध ही उचित है। यह खान बहादुर खा की सैनिक दक्षता का प्रमाण है।

खान बहादुर खा तथा उनके सहयोगियो का विचार था कि जब तक अग्रेज नैनीताल मे सुरक्षित रहेगे तब तक उनका रुहेलखड पर पूर्ण अधिकार नही हो सकेगा। उन्होने नैनीताल पर आक्रमण करने का निश्चय किया। जुलाई 1857 मे उन्होने अपनी सेना अपने पौत्र बन्ने मीर की अध्यक्षता मे नैनीताल पर आक्रमण करने के लिए भेजी। बन्ने मीर की पराजय हुई तथा यह अभियान असफल रहा। खान बहादुर खा ने नैनीताल को जीतने के लिए दो-चार फिर प्रयास किये परन्तु सफल नही हो सके।

1857 के अत तक खान बहादुर खा रुहेलखड के शासक बने रहे। समस्त क्षेत्र सुरक्षित था तथा अग्रेज उस पर आक्रमण करने मे स्वय को असमर्थ पाते थे।

क्रांति ने अब दूसरा मोड लिया। दिल्ली मे क्रांतिकारी हार गये तथा लखनऊ मे भी उनकी पराजय हुई। अग्रेजो ने रुहेलखड की ओर प्रस्थान किया। 7 अप्रैल, 1858 को वालपोल

ने लखनऊ से एक शक्तिशाली सेना के साथ रुहेलखड की ओर प्रस्थान किया। 17 अप्रैल, 1858 को कालिन भी सेना के साथ लखनऊ से रुहेलखड की ओर चल पडा। खान वहादुर खा ने वरेली के पास अग्रेजो से डटकर मुकावला करने का निणय लिया। 5 मई को नकटिया नदी के पास युद्ध हुआ। खान वहादुर खा सम्पूर्ण शक्ति और उत्साह के साथ लड रहे थे। उसी समय गाजी लोग हरे साफे वाधकर तथा हाथो मे तलवार लेकर युद्ध मे सम्मिलित हो गये। गाजियो ने अग्रेजी सेना पर आक्रमण किया तथा उन्हे बुरी तरह परास्त किया। वालपोल तथा केमरन घायल हो गये। अगले दिन फिर युद्ध हुआ। कालिन की सेना ने पुन क्रातिकारी सेना पर जोरदार आक्रमण किया। भारतीय सेनानियो के पाव उखड गये। खान वहादुर खा अन्य क्रातिकारियो सहित वरेली छोडकर पीलीभीत चले गये। 7 मई, 1858 को बरेली पर अग्रेजो का पूण अधिकार हो गया।

खान बहादुर खा पीलीभीत से अवध चले गये। अवध मे पहुचने के वाद वह छुपे छुपे इधर-उधर घूमते रहे। इसके पश्चात् 55 अन्य क्रातिकारी नेताओ के साथ नेपाल की तराई की ओर निकल गये। उनके साथ अवध की वेगम हजरत महल तथा नानासाहव, ज्वालाप्रसाद, वालासाहव आदि क्राति के मुख्य नेता भी थे। इन लोगो ने नेपाल के राणा जगवहादुर से सम्व ध स्थापित करने का प्रयास किया, पर उ हे क्रातिकारियो के प्रति कोई सहानुभूति नही थी। खान वहादुर खा अन्य क्रातिकारी नेताओं के साथ इधर से उधर भटकते रहे। उन्हे बहुत कठिनाइयो का सामना करना पडा। जगवहादुर ने अपनी सेनाओ को भेजकर क्रातिकारी नेताओ को पकडवा लिया। इनमे से प्रमुख नेता खान वहादुर खा, मम्मू खा और ज्वालाप्रसाद थे। जिन्हे व दी वनाकर लखनऊ के कारागृह मे भेज दिया गया।

न्यायालय ने खान वहादुर खा के ऊपर अग्रेजो के विरुद्ध क्राति को प्रोत्साहन देने का और राजद्रोह का अभियोग लगाया। खान वहादुर खा को मृत्यु दड दिया गया। अवध के गजट के अनुसार उन्हे वरेली मे फासी दी गई। 24 मार्च, 1860 को फासी देते समय वरेली के ज्वाइट मजिस्ट्रेट भी उपस्थित थे। खान बहादुर खा वीरतापूवक फासी के फदे पर झूल गये। उनके सबधियो ने उनकी लाश मागी, पर उनका शव तक उनके सबधियो को नही दिया गया तथा उन्हे वही किले मे दफन कर दिया गया। उनकी स्मृति हमारे हृदय मे अनन्तकाल तक अमिट रहेगी।

# नवाब नूर सनद खान

वर्तमान हरियाणा के समस्त क्षेत्र को 1857 की क्रांति की लहर ने झकझोर दिया था। 1803 में ईस्ट इंडिया कंपनी ने मराठों से एक संधि द्वारा हरियाणा पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था। अंग्रेजो ने 1833 मे नार्थ-वेस्टर्न प्राविंसिस का निर्माण किया तथा इस प्रदेश के शासन प्रबंध को सुव्यवस्थित करने के लिए हिसार, रोहतक, गुडगाव के क्षेत्र देहली-डिवीजन के अंतर्गत कर दिए गए। इस व्यवस्था से विशेष अंतर नही पडा। हरियाणा वासियो के अंतर मे क्रांति की चिनगारी पनपती रही। सदियो से हरियाणा के ग्रामो की स्वतंत्र सत्ता रही थी। उस समय एक लोकगीत प्रचलित था

"दिल्ली पाछे मरद भतेरे
वसँ देश हरियाणा।
आपै बोवँ, आपै खावँ
किसी नै दँ न दाणा।"

हरियाणा निवासी अंग्रेजो के शासन को कभी स्वीकार नही कर सके। जागीरदारो और शासको मे असंतोष था। क्रांति का आरंभ होते ही उन्होने उसका आह्वान किया। सिपाहियो मे भी पर्याप्त अशांति थी। क्रांति का विस्फोट होते ही गुडगाव, भिवानी, रोहतक, हिसार, पानीपत, अम्बाला क्षेत्र अंग्रेजो के विरुद्ध उठ खडे हुए और स्वतंत्र हो गये। हरियाणा के क्रांति के इतिहास मे रानिया के नवाब नूर सनद खान के बलिदान का महत्वपूर्ण स्थान हैं। रानिया हिसार के पास छोटा सा राज्य था। क्रांति से बहुत पहले ही 1818 मे रानिया पर अंग्रेजों ने अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था। वहा के नवाब परिवार को 5,700 रुपये प्रति वर्ष पेंशन के रूप मे प्रदान किए जाते थे। जिस समय क्रांति का आरंभ हुआ नवाब नूर सनद खान को 200 रुपये महीना, उनकी दादी को 100 रुपये महीना, मा को 150 रुपये महीना, चाचा को 125 रुपये महीना तथा बाकी संबंधियो को 100 रुपये अंग्रेजो द्वारा पेंशन के रूप मे दिये जाते थे। रानिया के नवाब के लिए यह स्थिति असहनीय व अपमान-जनक थी। जैसे ही 1857 मे क्रांति का आरंभ हुआ उन्होने उसका स्वागत किया। दिल्ली पर क्रांतिकारियो का आधिपत्य स्थापित होते ही उन्होने भी विद्रोह का झंडा खडा कर दिया।



नवाब नूर समद खान को लाहौर मे फासी पर लटका दिया गया।

क्राति के आरभ से पहले ही सिरसा क्षेत्र मे स्थिति असामान्य थी। वहा के सुपरिटेंडेंट रौबर्टसन ने रुनिया के नवाब को बुलाया और उनसे उस क्षेत्र की रक्षा के लिए सेना एकत्रित करने को कहा। नवाब नूर सनद खान ने अश्वारोहियो और पदातियो की एक बडी सेना का गठन कर लिया उन्हे इस कार्य के लिए व्यय की राशि अग्रेजो द्वारा दी गई थी। जिस समय क्राति का आरभ हुआ नवाब सनद खान सिरसा मे उपस्थित थे। उन्होने अग्रेजो का साथ देने के स्थान पर क्रातिकारियो की सहायता करना अधिक श्रेयस्कर समझा। क्राति कारी सिपाहियो की सहायता से सिरसा क्षेत्र मे नवाब नूर सनद खान ने अग्रेजो का विनाश कर दिया। दिल्ली के बादशाह बहादुरशाह जफर के नेतृत्व मे नवाब नूर सनद खान को सिरसा क्षेत्र का शासक घोषित कर दिया गया। नवाब नूर सनद खान के चाचा गौहर अली खान ने भी उनका साथ दिया। बाद मे उनके चाचा गौहर अली खान को भी पकड लिया गया और फासी पर लटका दिया गया। नवाब नूर सनद खान के साथियो ने सिरसा शहर को तहस नहस कर दिया तथा अग्रेजो के खजाने को लूट लिया। राज्य के दफ्तरो तथा अन्य सपत्ति पर भी नवाब नूर सनद खान का अधिकार हो गया। बदियो को जेल से छुडा दिया गया। सिरसा क्षेत्र मे अग्रेजो के राज्य का नामोनिशान मिट गया।

जून के महीने मे पजाब के चीफ कमिश्नर जान लारेस ने जनरल कोटलैड को एक बहुत बडी सेना के साथ नवाब सनद खान को पराजित करने के लिए भेजा। 17 जून को रुनिया के निकट उद्यान नामक ग्राम के पास डटकर युद्ध हुआ। नवाब नूर सनद खान और उनके साथियो ने वीरता और साहस से अग्रेजो से लोहा लिया। रुनिया के नवाब के 530 साथियो ने युद्ध के मैदान मे ही वीरगति प्राप्त की। अत मे नूर सनद खान अग्रेजो द्वारा पराजित हुए। उनकी तथा उनके साथियो की वीरता निर्विवाद थी परन्तु उनके पास सैनिक सामग्री तथा तोप गोले अग्रेजो की अपेक्षा कम थे। यही उनकी पराजय का मुख्य कारण था। नवाब सनद खान लडाई के मैदान से बच कर निकल गये परन्तु उन्हे लुधियाना के पास बदी बना लिया गया। पजाब के न्यायाधीश मोटगुमरी के न्यायालय मे उन पर मुकदमा चला और उन्हे मृत्यु दड दिया गया।

रुनिया के नवाब नूर सनद खान को लाहौर मे फासी पर लटका दिया गया।



राव तुलाराम ने 1857 की क्रांति का स्वागत किया और सक्रिय रूप से उसमें जुट गए।

# राव तुलाराम

राव तुलाराम के नेतृत्व मे अहीरवाल के लोगो ने 1857 की जन-क्राति मे उत्साह और वीरता के साथ अग्रेजो का विरोध किया। 'अहीरवाल' का तात्पर्य है 'अहीरो का आवास स्थल'। अहीर खेतीहर लोग थे तथा रिवाडी और नारनौल के क्षेत्र मे बहुतायत से रहते थे। इसी कारण यह क्षेत्र 'अहीरवाल' कहलाने लगा। प्रत्येक सामाजिक एव सास्कृतिक कार्य के लिए रिवाडी उनका प्रमुख केन्द्र था। रोहतक, हिसार तथा पानीपत मे इनकी सख्या नगण्य थी।

राव तुलाराम का जन्म 1825 मे रामपुरा, रिवाडी मे हुआ था। उनके पिता का नाम पूरनसिंह था। तुलाराम रिवाडी के राव-परिवार के वशज थे। औरगजेब ने 20,00,000 रुपये प्रतिवर्ष आय की जागीर राव परिवार को भेंट मे दी थी। रिवाडी के राव लोगो ने 1803 मे अग्रेजो के विरुद्ध मराठो की सहायता की थी। जब वहा अग्रेजो का प्रभुत्व स्थापित हो गया तो राव परिवार की जागीर छीन ली गई। इस वात से राव परिवार के सम्मान को गहरा धक्का लगा। वह अग्रेजो के प्रति विक्षुब्ध हो उठे। 1839 मे अपने पिता की मृत्यु के उपरात तुलाराम जागीरदार बने। उनके हृदय मे अग्रेजो के प्रति क्रोध तो था ही, 10 मई, 1857 को जब क्राति का आरभ हुआ तो उन्होने उसका स्वागत किया और सक्रिय रूप से उसमे जुट गये।

17 मई, 1857 को तुलाराम और उनके भाई गोपालदेव अपने चार-पाच सौ सहयोगियो के साथ रिवाडी पहुचे। उन्होने वहा के अग्रेजो द्वारा नियुक्त थानेदार और तहसीलदार को पदच्युत कर दिया। समस्त राजकीय भवनो पर उन्हाने अपना अधिकार स्थापित कर लिया। क्रातिकारियो ने दिल्ली के बादशाह बहादुरशाह जफर के आधिपत्य मे तुलाराम को रिवाडी परगना का राजा घोषित कर दिया। रिवाडी के अतिरिक्त उनके राज्य क्षेत्र मे मौरा और शाहजहापुर भी आते थे। उनके अधिकार म लगभग 361 ग्राम थे। उन्होने रामपुरा को अपना मुख्य केन्द्र बनाया। अपने छोटे भाई गोपालदेव को अपना सेनापति बनाया।

रिवाडी का राजा बनने के उपरात तुलाराम ने राजस्व विभाग को सुव्यवस्थित किया। उन्होने जनता से राज्य कर वसूल किया। रुपया इकट्ठा हो जाने के उपरात वह क्राति के कार्य मे जुट गये। उन्होने 5,000 सेनानियो की एक बडी सेना एकत्रित की। सैन्य-सामग्री बनाने के लिए रामपुरा मे उन्होने एक कारखाना स्थापित किया। यहा पर तोपें भी

बनती थी। बाम्बे ओवरलैंड टाइम्स के नवम्बर 1857 के अंक में राव तुलाराम द्वारा बनवायी पीतल की तोपो की बेहद सराहना की गई है। राव तुलाराम ने अपने क्षेत्र में शांति स्थापित की।

राजा राव तुलाराम के कार्य से बहादुरशाह जफर बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने तुलाराम को रिवाडी तथा मोरा और शाहजहांपुर का राजा बनने का पुष्टिकरण कर दिया। उन्होंने बहादुरशाह जफर से क्रांति का नेतृत्व करने की प्रार्थना की। बहादुर शाह जफर ने क्रांति की डोर अपने हाथ में ले ली। किन्तु धन के अभाव ने परिस्थिति को बहुत कठिन बना दिया। खजाने में धन के अभाव के कारण सैनिकों को वेतन नहीं मिल पा रहा था। धन की कमी तथा वेतन न दे सकने के कारण सेना में अराजकता फैल रही थी। सिपाही इधर उधर लूटमार कर रहे थे। ऐसी विकट परिस्थितियों में राजा राव तुलाराम ने सेनापति बरन खां द्वारा सेना में वितरण हेतु, बहादुरशाह जफर के पास धन भेजा। राजा राव तुलाराम द्वारा भेजे हुए 45,000 रुपये तुरत ही सेना में बाट दिये गये। अंग्रेजों ने दिल्ली के पास पहाडी पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया था। दिल्ली की सेना निरंतर उनके साथ युद्ध में लगी हुई थी। राव तुलाराम ने खाद्य-सामग्री तथा सैनिक आवश्यकता की अन्य वस्तुएं मुद्धरत क्रांतिकारी सेना के लिए दिल्ली भिजवाई। बादशाह ने राव तुलाराम से अफीम और बारूद बनाने के लिए गंधक भी मंगवाई थी। उस समय दिल्ली में कहीं भी गंधक नहीं मिल पा रही थी। राव तुलाराव ने गंधक का प्रबन्ध किया।

राजा राव तुलाराम के सहयोगी भी वीर क्रांतिकारी थे। कृष्णसिंह रिवाडी के पास नागल के रहने वाले थे। वह बहुत बहादुर थे। 20 साल की आयु में वह नौकरी की तलाश में मेरठ गये थे। उन्हें मेरठ का कोतवाल नियुक्त किया गया। क्रांति के आरम्भ से ही उनकी सहानुभूति क्रांतिकारियों की ओर थी। 3 जून को अंग्रेज अधिकारियों ने उन ग्रामवासियों को दंड देने का निर्णय किया जिन्होंने क्रांति के समय में क्रांतिकारियों की सहायता की थी। कृष्णसिंह ने ग्रामवासियों पर आक्रमण करने में देर लगा दी जिससे वे लोग भाग गये। अंग्रेज सेनापति ने खाली गावों में आग लगाकर अपने प्रतिशोध की ज्वाला को शांत किया। कृष्णसिंह से वह बेहद क्रुद्ध हो उठे। वे मेरठ से भागकर राव तुलाराम के पास रिवाडी पहुंच गये। राजा राव तुलाराम ने उन्हें अपनी अश्वारोही सेना का सेनापति नियुक्त किया। राजा राव तुलाराम के साथ मिलकर अंग्रेजो के विरुद्ध लड़ते लड़ते उन्होंने अपने प्राण उत्सर्ग किये। गोपालदेव जो राजा राव तुलाराम की सेना में सेनापति थे, बहुत वीर एवं पराक्रमी थे। उन्होंने भी राजा राव तुलाराम के साथ मिलकर अंग्रेजो का डटकर विरोध किया। क्रांति के अंत में अंग्रेजो ने उनकी सब जमीन-जायदाद जब्त कर ली थी। ऐसे वीर सेनानियो के सहयोग से राजा राव तुलाराम ने अंग्रेजो से मोर्चा लिया था।

मई 1857 के अंत तक वर्तमान हरियाणा के अधिकांश क्षेत्र अंग्रेजो के आधिपत्य से मुक्त हो गये थे। परन्तु यह स्वतन्त्रता स्थायी नहीं रह सकी। धीरे-धीरे अंग्रेजो ने हिसार,

पानीपत, रोहतक पर पुन अधिकार स्थापित कर लिया। अंग्रेज सैनिक टुकडी और आगे बढी और उन्होने रिवाडी पर आक्रमण कर दिया। राजा राव तुलाराम ने अपनी व्यवहारकुशल बुद्धि द्वारा तुरन्त समझ लिया कि रामपुरा के कच्चे मिट्टी के किले की सुरक्षा असभव है। दिल्ली का पतन हो चुका था और वहा से किसी प्रकार की सहायता की कोई आशा नही थी। इन परिस्थितियो मे अंग्रेजो का सामना करने का तात्पर्य था अपना ही विनाश। ब्रिगेडियर जनरल शावस के रिवाडी पहुचने से पहले ही राजा राव तुलाराम ने रामपुरा का किला छोड दिया। अंग्रेजो की सेना जब रिवाडी पहुची तो उन्हे खाली किला, कुछ तोपे तथा कुछ बदूकें मिली। ब्रिगेडियर जनरल शावस ने किले पर तुरन्त अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया और राजा राव तुलाराम के पास सदेश भेजा—"यदि आप आकर आत्मसमपण कर दगे तो आपके साथ यथोचित न्याय किया जायेगा।" राजा राव तुलाराम वीर सेनानी थे। उनका किसी प्रलोभन मे आने का प्रश्न ही नही उठता था। उन्होने आत्म समपण भी नही किया और अंग्रेजो से बदला लेने की योजना बनाने मे कायरत रहे। ब्रिगेडियर जनरल शावस एक सप्ताह तक रिवाडी रहे और उसके उपरात झज्झर की ओर बढ गये।

ब्रिगेडियर जनरल शावस विपुल धन राशि, प्रमुख क्रातिकारी बदियो तथा अन्य सैन्य-सामग्री को लेकर दिल्ली पहुचे। उनका मुख्य लक्ष्य रिवाडी के राव तुलाराम को पकडना था। परन्तु वह सफल नही हो सके। वह रिवाडी के कृष्णसिंह, झज्झर के अब्दुसमद खा तथा मुहम्मद अजीम बदूदू को बदी बनाने मे भी असफल रहे। यही लोग हरियाणा की क्राति के मुख्य प्रवर्त्तक थे। एक प्रकार से शावस के आक्रमण ने क्रातिकारियो की सहायता ही की। वे लोग अपने-अपने स्थानो को छोडकर राजस्थान को चले गए। राव तुलाराम भी उनके साथ थे। उन्हे जोधपुर के लश्कर की सहायता मिली। उनके सहयोग से क्रातिकारियो ने अंग्रेजो के साथ युद्ध करने का निणय किया। राव तुलाराम अपने सहयोगियो के साथ रिवाडी लौटकर आए और तुरन्त ही वहा पर पुन विजय प्राप्त कर ली। रामपुरा के किले पर स्वदेशी झडा लहराने लगा। परन्तु वह रिवाडी को अपना सैनिक केंद्र बनाना उचित नही समझते थे। उन्होने रिवाडी शहर को छोड दिया और नारनौल पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। नारनौल का किला सुदृढ था और सामरिक दृष्टि से बहुत महत्वपूण था।

राजा राव तुलाराम की रिवाडी-विजय से अंग्रेज अधिकारी बहुत चिंतित हो उठे। उन्होने एक सैनिक पलटन रिवाडी की ओर भेजी। उनके साथ तोपें तथा अन्य सैन्य-सामग्री भी थी। कनल जेरार्ड ने सेनापतित्व सभाला। वह अपनी कायकुशलता के लिए प्रसिद्ध थे। 10 नवम्बर, 1857 को अंग्रजी सेना दिल्ली सेचली और तीन दिन के उपरात रिवाडी पहुची। उन्होने रामपुरा के किले पर अविलब विजय प्राप्त कर ली। रामपुरा मे एक दिन आराम करने के उपरात कनल जेराड महेद्रगढ होते हुए नारनौल की ओर बढे। नारनौल केवल 14 मील दूर था परन्तु वहा की भूमि बहुत रेतीली थी इस कारण सेना को आगे बढने मे बहुत

कठिनाई हो रही थी। तोपों को घसीट-घसीटकर आगे बढ़ाना पड़ रहा था तथा पैदल सेना को बार-बार रुकना पड़ता था। अंग्रेजों की सेना नारनौल के निकट बारह बजे के लगभग पहुंची और जब एक गांव के पास आराम कर रही थी तभी राव तुलाराम की क्रांतिकारी सेना ने अंग्रेजों की सेना पर धावा बोल दिया। अंग्रेजों की सेना तुरन्त लड़ने के लिए तैयार हो गई। क्रांतिकारियों के प्रथम आक्रमण से अंग्रेजी सेना तितर बितर हो गई थी। लेकिन भारतीय सेना की प्रथम विजय चिरस्थायी नहीं हो सकी। राव तुलाराम की क्रांतिकारी सेना अंग्रेजों की धुआंधार तोपों की गोलाबारी के आगे टिक नहीं सकी। भारतीय सैनिकों ने अपने प्राणों की बाजी लगा दी परन्तु अंग्रेजों की सेना ने उनकी कुछ तोपें अपने अधिकार में कर ली थीं जिससे क्रांतिकारी निराश हो उठे थे। ऐसे समय में कर्नल जेराड के गोली लगी तथा उनकी वहीं पर मृत्यु हो गई। अंग्रेज सेना एक बार फिर हतोत्साहित हो गई। राव तुलाराम की सेना ने अपनी तोपों पर पुनः अधिकार कर लिया। स्थिति की गम्भीरता को समझते हुए मेजर कफील्ड ने भारतीय सेना पर भारी गोलाबारी आरम्भ कर दी। भारतीय वीरता के साथ लड़े। परन्तु तभी राजा राव तुलाराम की अश्वारोही सेना के सेनापति कृष्णसिंह को गोली लगी और उनकी वहीं मृत्यु हो गई। सेनापति रामलाल ने भी वहीं लड़ाई के मैदान में वीरगति प्राप्त की। भारतीय सेना निराश हो गई और पीछे हट गई। अंग्रेजों की सेना आगे बढ़ी। भारतीय सेना उसका सामना नहीं कर सकी तथा इधर-उधर बिखर गई। विजय अंग्रेजों के हाथ लगी। बहुत से वीर क्रांतिकारी योद्धाओं ने लड़ाई के मैदान में मृत्यु का वरण किया। अंग्रेजों को भी क्षति हुई। उनके सेनापति कर्नल जेराड तथा कैप्टन वालेस की रण-क्षेत्र में मृत्यु हुई। 70 अन्य सेनानी भी मारे गये तथा 45 घायल हुए। राजा राव तुलाराम बचकर भाग गये। नारनौल में राजा राव तुलाराम तथा अन्य क्रांतिकारियों की पराजय के उपरांत हरियाणा तथा उत्तरी राज्यों में क्रांति का अंत हो गया।

नारनौल की पराजय के उपरांत राव तुलाराम राजस्थान चले गये। रानी विक्टोरिया ने 1 नवंबर को अपना घोषणा पत्र प्रकाशित किया जिसके अनुसार प्रत्येक क्रांतिकारी के आत्म-समर्पण करने के उपरांत उसके समस्त अपराधों को क्षमा करने का निर्णय उल्लिखित था।

अंग्रेज अधिकारी समस्त क्रांतिकारियों के प्रति सदय थे तथा उन्हें क्षमा करने को तत्पर थे परन्तु वे राव तुलाराम को भयंकर अपराधी मानते थे और रानी विक्टोरिया के घोषणा पत्र के उपरांत भी उनकी कोई बात मानने को तैयार नहीं थे राजा राव तुलाराम ने 1862 में भारतवर्ष छोड़ दिया और ईरान पहुंचे। वहां से वह अफगानिस्तान चले गये। 19 सितंबर 1863 को काबुल में 38 वर्ष की अल्पायु में उनकी मृत्यु हो गई। देशप्रेमी वीर राव तुलाराम ने अपने देश से दूर अपने प्राण त्याग दिये परन्तु वह देशवासियों के हृदय में प्रेरणा का अजस्र स्रोत बनकर जीवित रहेंगे।

# शहजादा फिरोजशाह

शहजादा फिरोजशाह निजाम वरत के पुत्र थे, जो वहादुरशाह प्रथम के वशज थे। उनका सम्बन्ध तैमूर और दिल्ली के राज परिवार से था। वह 1855 मे दिल्ली से मक्का चले गये थे तथा मई 1857 मे वम्बई लौट आये। क्रांति के समय उनकी उम्र केवल 22 वप के लगभग थी। स्वदेश लौटते ही वह पूर्ण उत्साह के साथ स्वतन्त्रता के युद्ध मे कूद पड़े।

वम्बई से दिल्ली लौटते ही शहजादा फिरोज ने मदसौर मे अग्रेजो के विरुद्ध "जिहाद" की घोपणा कर दी। वह मुगलिया वश के शहजादे ये और फकीरो का वाना धारण करते थे। इमसे आम जनता पर उनका वहुत प्रभाव पडा। वह नगर से बाहर एक एकान्त मस्जिद मे रहने लगे। हजारो लोग, जिनमे अधिकाशत मकरानी और अफगान थे, उनके चारो ओर एकत्र हो गये।

26 अगस्त, 1857 को प्रात काल नौ वजे के लगभग शहजादा फिरोज अपने तीन-चार साथियो के साथ मदौर मे डूडन सैयद की दरगाह पर आए। शहजादे को ग्वालियर के सिंधिया के आदेशानुसार तुरन्त शहर छोड देने का निर्देश दिया गया। शहजादा फिरोज ने इन आदेशो का पालन करने से इन्कार कर दिया। इस वात को लेकर झगडा वढ गया। पचास साठ अश्वारोहियो के साथ राजस्व अधिकारी वहा पर पहुचे। शहजादा फिरोज के सकेत पर उसी समय वहा दो तीन सौ सैनिक उपस्थित हो गये। इन सैनिको को तुरन्त सिंधिया की राज्य सेवा मे मुक्त कर दिया गया तथा ये लोग अब शहजादे के साथ थे। दोनो ओर से तलवारें खिच गयी। शहजादे के सैकडो समथक उस स्थान पर एकत्रित हो गये। लडाई हुई जिसमे राजस्व अधिकारी की मृत्यु हो गई तथा कोतवाल को वन्दी वना लिया गया। इस विजय के उपरान्त शहजादा फिरोजशाह के सहयोगी उन्हे राजमहल मे ले गये। उन्हे राज-गद्दी पर बैठा दिया गया तथा मदसौर का शासक घोषित कर दिया गया।

मदसौर की घटना का मध्य भारत की क्रांति के इतिहास मे विशिष्ट स्थान है। वहा के स्वतन्त्रता सग्राम को, जो वीज रूप मे पनप रहा था, अब दिशा मिल गयी थी। शहजादा फिरोज ने मिर्जा जी को अपना मुख्यमन्त्री नियुक्त किया। उन्होने वडे-वडे व्यापारियो को निमन्त्रण भेजा तथा सुरक्षा का पूण आश्वासन दिया। व्यवसायियो ने शहजादे को "नजर" भेंट की। शहजादे फिरोज की आज्ञानुसार पुराने दस्तावेज जला दिये गये। पुरानी नियुक्तियो का स्थायीकरण कर दिया गया। मदसौर, क्रांति का वडा केन्द्र वन गया। ग्वालियर के



शहजादा फिरोजशाह स्वतन्त्रता-संग्राम में कूद पड़े।

महाराजा के प्रभुत्व को, जो अंग्रेजो के साथी थे, पूणरूप से अस्वीकार कर दिया गया। शहजादा फिरोज ने एक पत्र प्रतापगढ, जावरा, सीतामऊ और रतलाम के राजाओ को लिखा, जिसमे उन्हे लिखा गया था कि वे उनका प्रभुत्व स्वीकार कर लें। फकीर शहजादे के प्रभाव से दो महीने के अन्दर-अन्दर मदसौर मे क्रातिकारियो की सख्या लगभग बीस हजार हो गयी। मदसौर के क्रातिकारियो ने अंग्रेजो के दक्षिण से सम्पर्क के सब साधनो को काट दिया था। उन्होंने अंग्रेजो की डाक व्यवस्था को अस्त व्यस्त कर दिया। अंग्रेजो का जो भी सन्देश-वाहक उन्हे मिलता वे उसे मार डालते थे। अंग्रेज फिरोजशाह शहजादे तथा उनके समर्थको से बेहद सत्रस्त थे।

शहजादा फिरोज ने अपने शासन को मदसौर मे सुदृढ करने के पश्चात् आसपास के राज्यो की तरफ अपना ध्यान केन्द्रित किया। मदसौर के पाच सौ मेवातियो ने नाहरगढ पर आक्रमण कर दिया तथा वहा पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। सौ सैनिक तथा अश्वा-रोहियो को खचरोद मे चौकी स्थापित करने के लिए भेजा गया। बम्बई तथा महोश्वर के सम्पर्क को काट दिया गया था। अब शहजादा फिरोज ने अपना ध्यान नीमच की ओर केन्द्रित किया। वह अंग्रेजो को नीमच से बाहर निकाल देने के लिए दृढ सकल्प थे। अक्तूबर के मध्य तक शहजादा फिरोज ने जीराम पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। शहजादा फिरोज को आगे बढने से रोकने के लिए 23 अक्तूबर को कैप्टन लायड नीमच से आगे बढे। अंग्रेज सेना की पराजय हुई। शहजादे फिरोज की सेना पहाडियो के ऊपर चढ गयी तथा वहा से अंग्रेज सेना पर आक्रमण किया। कैप्टन रीड तथा कैप्टन ठक्कर की भी युद्ध मे मृत्यु हो गई। अब अंग्रेज सेना नीमच की तरफ लौट गई। शहजादे की विजयी सेना मदसौर लौट आई। विजय के प्रतीक स्वरूप उनके साथ कैप्टन ठक्कर का सिर था जिसे उन्होने मदसौर के दरवाजे पर लटका दिया। 8 नवम्बर को शहजादे फिरोज की सेनाए फिर नीमच की ओर बढी। सेना ने नीमच के किले पर घेरा डाल दिया। विजय निकट ही प्रतीत हो रही थी। परन्तु उसी समय क्रातिकारी सेना को नीमच से हट जाना पडा। शहजादा फिरोज ने यह निणय परिस्थितिवश लिया। शहजादे ने जिस समय नीमच पर घेरा डाला, उसी समय उन्होने महीदपुर पर भी आक्रमण कर दिया था। महीदपुर मालवा की सेना का गढ था। सभवत इस आक्रमण का कारण यह था कि शहजादा फिरोज मालवा की सेना का ध्यान नीमच की ओर से हटाये रखना चाहते थे। शहजादा ने महीदपुर की सेना मे असतोष की भावना उत्पन्न कर दी थी। जिस समय फिरोजशाह की सेना ने महीदपुर पर आक्रमण किया वहा की मुसलमान सैनिक पलटनो ने अंग्रेजो का साथ देने से इन्कार कर दिया तथा वे शहजादे की सेना से मिल गई। एक सूचना के अनुसार शहजादे के सेनाध्यक्ष ने अपनी जेब से क्रांति का हरा झडा निकाला तथा वहा पर फहरा दिया। डाक्टर कैरी तथा लैफ्टिनेंट मिल की मृत्यु हो गयी। 12 नवम्बर को मेजर और महीदपुर की सहायता के लिये वहा

पहुचे। पर तु शहजादे फिरोज के महीदपुर आक्रमण का तात्पर्य पूरा हो चुका था। व लोग नीमच की ओर बढ गये। 21 नवम्बर को ब्रिगेडियर स्टुअर्ड तथा मेजर ओर ने मद सौर पर आक्रमण कर दिया। शहजादे फिरोज के लिए बडी विकट परिस्थिति उत्पन्न हो गई। मदसौर को बचाना अधिक आवश्यक था। इन परिस्थितियो मे उन्होने नीमच का घेरा उठा दिया। 24 नवम्बर को मदसौर मे युद्ध हुआ। अग्रेज सेना विजयी हुई तथा पराजित शहजादे को मदसौर छोड देना पडा।

मदसौर की पराजय के उपरान्त शहजादा फिरोज ग्वालियर गये। सभवत उन्होने इन्दौर के क्रातिकारियो का नेतृत्व सभाला। इसके पश्चात् वह आगरा गये तथा वहा पर युद्ध मे भाग लिया। कुछ काल तक वह फरुखाबाद रहे, परन्तु अग्रेजो ने वहा पर भी विजय प्राप्त कर ली। कुछ समय तक वह झासी भी रहे। इसके पश्चात् वह अवध की ओर चले गये तथा बेगम हजरत महल तथा मौलवी अहमदशाह के साथ मिल गये। इस समय उन्होने क्राति के सभी मुख्य केन्द्रो से सम्पर्क बनाये रखने का प्रयास किया। वह इधर-से उधर भटक रहे थे, परन्तु कठिनाई के इन क्षणो मे भी वह आगे का कार्यक्रम निर्धारित करने के लिए प्रयत्नशील रहे। उन्होने 17 फरवरी को एक घोषणा पत्र भी निकाला, जिसमे हिन्दुओ तथा मुसलमानो को अग्रेजो के विरुद्ध युद्ध लडने के लिए प्रेरित किया गया। घोषणा पत्र मे कहा गया था कि शहजादे ने 1,50,000 लोगो की सेना एकत्रित कर ली थी जो अपने लक्ष्य के प्रति समर्पित थे। शहजादा फिरोज इधर से उधर भटकते रहे। सफेद वस्त्रो मे, सफेद घोडे पर बैठे हुए, उन्हे स्थान स्थान पर देखा जा सकता था। लखनऊ के पतन के पश्चात् शहजादा फिरोज बरेली गये। बरेली जाते हुए वह मुरादाबाद भी गये। वह मुरादाबाद मे क्रातिकारियो के लिए धन एकत्रित करना चाहते थे। मुरादाबाद से वह मीरगज चले गये। मीरगज बरेली के निकट स्थित है। बरेली उस समय क्रातिकारियो की आश्रयस्थली थी। शहजादा फिरोज और खान बहादुर खा की सेनाओ के मिल जाने से वहा स्थिति सुदृढ हो गई थी। परन्तु फिर भी रुहेलखण्ड मे क्रातिकारी सेना की पराजय हुई।

अग्रेज अधिकारी स्वतत्रता सेनानियो को पूर्ण रूप से नष्ट कर देना चाहते थे। वे शहजादा फिरोज का पीछा कर रहे थे, परन्तु शहजादा फिरोज बचकर निकल गये तथा गगा पार कर दोआब पहुच गये। वहा से इटावा पहुचे। वहा पर उनका अग्रेज सेना से एक बार फिर मुकाबला हुआ। कैप्टन डायल की मृत्यु हो गई। सेनापति पर्सी फिरोजशाह का सामना करने के लिए पहुचे। शहजादे के पास सैन्य-शक्ति का अभाव था। इन परिस्थितियो में अग्रेजो से मुकाबला करना निरर्थक था। वह यमुना पार कर मध्य भारत की ओर चले गये और काल्पी पहुचे। उनकी सैनिक शक्ति बहुत दुर्बल हो गई थी। परन्तु शहजादा फिरोज के व्यक्तित्व मे कुछ ऐसा आकर्षण था जिससे उनके चारो ओर उनके समर्थको की सख्या फिर बढने लगी। सेनापति नेपियर ने तुरत शहजादे का पीछा किया। बहुत समय तक दोनो

सेनाओ मे आख मिचौनी होती रही। अन्त मे दोनो सेनाओ का आमने-सामने मुकाबला हुआ। शहजादा फिरोज साहस और वीरता से लडे, परन्तु अग्रेजो की सैन्य-शक्ति के सम्मुख वह ठहर नही सके। उनकी सेना को भारी क्षति हुई। अब उनकी सेना की सख्या केवल दो हजार रह गयी थी। रावसाहब भी उनके साथ थे। अग्रेज सेना उनका लगातार पीछा कर रही थी। इन विकट परिस्थितियो मे तीनो नेताओ ने अलग-अलग हो जाने का निणय किया। छोटी-छोटी टुकडियो मे वे जगलो मे अधिक आसानी से छुप सकते थे। केवल तीन घोडे और तीन साथियो के साथ तात्या टोपे पेरोन के जगलो मे चले गये। शहजादा फिरोज तथा रावसाहब ने सिरोज के जगलो मे आश्रय लिया। परन्तु यहा भी वह शान्ति से नही रह सके। अग्रेजो ने जगल का कोना-कोना छान मारा तथा उनका पग-पग पर पीछा किया। सारे जगल को साफ करा दिया गया और अन्त मे वे इन वीर क्रातिकारियो के शिविर तक पहुच गये। यहा भी अग्रेजो को मुह की खानी पडी। शहजादा फिरोज और रावसाहब वहा से गायब हो गये। अग्रेज उन्हे पकडने मे असमर्थ रहे।

अग्रेजो ने क्रातिकारियो के साथ समझौता करने का प्रयास किया। शहजादा फिरोज समझौते की किसी भी अपमानजनक शत को मानने के लिए तैयार नही थे। वह चाहते थे कि उनके देश मे भ्रमण करने पर कोई प्रतिबध नही होना चाहिए। उनके साथियो को उनके साथ रहने की अनुमति दी जानी चाहिए। उनके हथियार रखने पर भी कोई प्रतिबन्ध नही होना चाहिए। शहजादा फिरोज स्वाभिमानी थे। वह सीमा से अधिक झुकने के लिए तैयार नही थे। उनका अग्रेजो से कोई समझौता नही हो सका।

शहजादा फिरोज का भारत मे रहना खतरे से खाली नही था। शहजादे की उम्र बहुत छोटी थी तथा वह भविष्य के प्रति आशावादी थे। उन्होने देश छोड दिया तथा 1860 मे वह कधार चले गये। अग्रेज गुप्तचर अब भी उनका पीछा कर रहे थे। 1861 मे वह बुखारा चले गये। उनके पास धन का सर्वथा अभाव था। वह एक मुसलमान राज्य से दूसरे मुसलमान राज्य मे भटक रहे थे। सभवत वह मुसलमान राज्यो की सहायता से अग्रेजो को भारत से खदेड देना चाहते थे। उन्हे पर्शिया, अफगानिस्तान तथा मध्य एशिया से कोई सहायता नही मिली। कठिन परिस्थितियो से जूझते जूझते शहजादा फिरोज बिल्कुल थक गये थे। वह असमय मे ही वृद्ध लगने लगे थे तथा उनका स्वास्थ्य भी बिगड गया था। तैमूर के वशज शहजादा मक्का मे भयकर गरीबी मे जी रहे थे। उनके साथ केवल उनकी पत्नी थी। अपने देश तथा अपने मित्रो से दूर 17 दिसम्बर, 1877 को उनकी मृत्यु हो गई। शहजादा फिरोज सच्चे देश-प्रेमी थे। उन्होने समस्त देश मे घूम-घूमकर क्राति की ज्वाला को प्रज्ज्वलित रखा। उन्होने शत्रु के प्रति भी कभी अन्याय नही किया। उन्हें अपने लक्ष्य पर सम्पूर्ण विश्वास था। अपने व्यक्तित्व के बल पर बिना किसी आर्थिक सहायता के उन्होने एक बडी सेना खडी की थी और अग्रेजो के विरुद्ध धर्म-युद्ध की घोषणा कर दी। वह टूट गये, पर झुके नही। शहजादा फिरोज मरकर भी अमर है।

# रावसाहब

रावसाहब अंतिम पेशवा बाजीराव द्वितीय के पौत्र थे। बाजीराव द्वितीय ने स्वयं अंग्रेजों के विरुद्ध 1817 में युद्ध किया था। उनके तीन दत्तक पुत्र थे– धुंधूपंत, सदाशिवपंत तथा गंगाधरराव। ये लोग क्रमशः नानासाहब, दादासाहब तथा बालासाहब कहलाते थे। दादासाहब का देहांत अल्पायु में ही हो गया था। पाण्डुरंगराव दादासाहब के पुत्र थे तथा वह रावसाहब के नाम से जाने जाते थे। नानासाहब, बालासाहब तथा रावसाहब तीनों ने ही स्वतंत्रता संग्राम में अंग्रेजों के छक्के छुड़ा दिये थे तथा हंसते-हंसते देश के लिए अपने प्राणों की आहुति दे दी थी।

नवंबर 1817 को बाजीराव द्वितीय अंग्रेजों द्वारा पराजित हुए थे। तदुपरांत उन्होंने बिठूर में रहने का निर्णय लिया तथा उन्हें अंग्रेजों द्वारा आठ लाख रुपये प्रतिवर्ष की पेंशन प्रदान की गई। मृत्यु के समय उन्होंने नानासाहब को अपना उत्तराधिकारी चुना। अंग्रेजों ने नानासाहब की पेशवा की उपाधि स्वीकार करने से इन्कार कर दिया तथा उनकी पेंशन भी बंद करने का निर्णय लिया। इस अन्याय से पेशवा परिवार किंकर्तव्यविमूढ़ रह गया। रावसाहब ने अंग्रेजों के विरुद्ध नानासाहब को सहयोग देने का प्रण किया। नानासाहब ने क्रांति की भावना को जागृत करने के लिए देश-भर में भ्रमण किया। भारत भ्रमण में नानासाहब के साथ रावसाहब तथा उनके अन्य प्रमुख सहयोगी थे। वह पहले दिल्ली गये तथा उसके उपरांत वाराणसी, इलाहाबाद, बक्सर, गया, पंचवटी, रामेश्वरम्, द्वारका, नासिक, मथुरा, बद्रीनाथ होते हुए वापस लौट आये। उन्होंने क्रांति का कार्यक्रम बनाया और देश-भर में क्रांति के आरंभ करने के लिए 31 मई की तिथि निर्धारित कर दी। कानपुर की क्रांति के उपरांत सिपाहियों ने कल्याणपुर में नानासाहब को अपना नेता घोषित कर दिया। उस समय भी रावसाहब उनके साथ थे। 27 जून, 1857 को भारतीय सेना ने नानासाहब के सम्मुख परेड की। इस अवसर पर नानासाहब को 21 तोपों की सलामी दी गई तथा रावसाहब को 17 तोपों की सलामी से सम्मानित किया गया। रावसाहब, नाना धुंधूपंत के प्रमुख सहयोगियों में से एक थे तथा जब तक वह कानपुर में रहे सदैव उनके कंधे से कंधा मिलाकर खड़े रहे।

नानासाहब व रावसाहब ने कानपुर में अंग्रेजों के विरुद्ध पूर्ण निष्ठा के साथ युद्ध किया, किन्तु दुर्भाग्यवश उनकी पराजय हुई। वीर सेनानी पराजय से हतोत्साहित नहीं होते।

रावसाहब काल्पी मे झासी की वीरागना रानी से जा मिले। उस समय तक झासी का पतन हो चुका था। बादा के नवाब भी वहा पर उपस्थित थे। रावसाहब, झासी की रानी तथा बादा के नवाब सरीखे तीन अग्रणीय क्रातिकारियो ने मिलकर काल्पी मे घमासान युद्ध लडा। एक बार तो ऐसा लगा कि अग्रेज सेना के पाव ही उखड गये। कनल रावटसन की सेना ने मुह की खायी। ह्यू रोज घबरा उठा और उसने क्रातिकारियो पर अतिम वार किया। उसके पास ऊटो की सुरक्षित टुकडी थी। उसने इस टुकडी को आक्रमण करने की आज्ञा दी। अनायास ही क्रातिकारी सेना के पाव उखड गये तथा क्रातिकारी नेता काल्पी छोडकर ग्वालियर की ओर चले गये।

काल्पी के पतन के पश्चात क्रातिकारी नेताओ ने तथा सिपाहियो ने आगे की नीति निर्धारित करने के लिए एक सम्मिलित सभा बुलाई। सिपाही अवध की ओर जाना चाहते थे। झासी की रानी का मत था कि झासी मे करेरा को युद्ध-केन्द्र बनाया जाये। रावसाहब ने परामश दिया कि अब दक्षिण की तरफ बढना उचित रहगा। अपने शासन-काल मे पेशवाओ का दक्षिण पर आधिपत्य था। रावसाहब को पूण विश्वास था कि उनके आह्वान पर दक्षिण के बहुत से शासक भी उनके साथ हो जाएगे। उनको आशा थी कि पेशवा की सेना को देखते ही दक्षिण की जनता भी क्राति मे सहयोग देगी। परन्तु इस योजना के लिए धन की आवश्यकता थी। रावसाहब ने ग्वालियर के सिंधिया से सहायता लेने का निणय किया। सिंधिया के पूर्वजो ने रावसाहब के दादा परदादा के अधीन काय किया था। सिंधिया के क्राति मे सम्मिलित होने के उपरात उत्तरी भारत के और राजा भी स्वतत्रता सग्राम मे सम्मिलित हो सकते थे। उस समय समस्त उत्तरी भारत मे क्रातिकारी पराजित हो रहे थे। वे निराश हो उठे थे। उनके प्रमुख केन्द्र छिन गये थे। इन कठिन परिस्थितियो मे भी रावसाहब ने स्वतत्रता की ज्योति को प्रज्ज्वलित रखने का अथक प्रयास किया। उन्होने ग्वालियर तथा दक्षिण भारत को निरुत्साहित क्रातिकारियो की आशा का केन्द्र बनाया।

सितबर के महीने मे तात्या टोपे ग्वालियर आये थे। उन्होने देखा कि सिंधिया की सेना मे पर्याप्त असतोष था। सिपाही चाहते थे कि ग्वालियर के सिंधिया को ईस्ट इडिया कपनी के स्थान पर पेशवा की सहायता करनी चाहिए। तात्या टोप को विश्वास हो गया कि ग्वालियर मे उन्हे निश्चय ही सफलता मिलेगी। 28 मई, 1858 को क्रातिकारी सेना ने ग्वालियर की सीमा मे प्रवेश किया। परन्तु उनके कुछ साथी ग्वालियर की तरफ जाने मे हिचकिचा रहे थे। रावसाहब ने उनसे कहा हम यहा युद्ध लडने के लिए नही आये है। हम यहा केवल कुछ दिन रुकेंगे। हम धन तथा युद्ध-सामग्री लेकर दक्षिण की ओर चले जाएग। ग्वालियर की सेना हमारे साथ है। वह निश्चित रूप से हमारे साथ सम्मिलित हो जाएगी। तुम विश्वास रखो। हमारे पास सैकडो पत्र ग्वालियर से आश्वासन और निमत्रण के आये

है। सिंधिया को कहलवाया गया, "खर्चे के लिए चार लाख रुपये दो, अन्यथा लड़ाई के लिए तैयार हो जाओ।" ग्वालियर के राजा अंग्रेजो के सहयोगी थे। उन्होंने क्रांतिकारी सेना से लडने का निर्णय किया। रावसाहब और झांसी की रानी ने अपनी सेना को प्रेरणा देते हुए एक जून को यह शब्द कहे—"जिस समय लड़ने का समय होता है, उस समय आप लोग कायरता दिखाते है। यदि आप ही हमारी हार का कारण बनेंगे तो हम लोग कहा जायेंगे। हम लोगो ने मृत्यु को वरण करने का निश्चय किया है। जो लोग हमारे साथ मृत्यु को स्वीकार करना चाहते है, वह यहा रुकें। बाकी लोग जा सकते हैं।" बरेली और बादा के नवाबो ने कहा—"हम लोग आपके साथ मृत्यु को अंगीकार करेंगे।" ग्वालियर के किले को, वहा के रक्षक बलदेवसिंह ने इसी भावना से प्रेरित होकर बिना किसी युद्ध के क्रांतिकारी सेना को सौंप दिया। सिंधिया की सेना क्रांतिकारियो से जा मिली और उन्होंने रावसाहब की सेना पर गोली चलाना अस्वीकार कर दिया। ग्वालियर के महाराजा, अपने दीवान के साथ, आगरा की तरफ भाग गये। क्रांतिकारी सेना ने विजयोल्लास से भरकर ग्वालियर मे प्रवेश किया। ग्वालियर में पेशवा का राज्य घोषित कर दिया गया। रावसाहब को पेशवाधिराज की पदवी प्रदान की गई। समस्त मध्य भारत मे नूतन उत्साह की लहर दौड गई। क्रांतिकारी सेना मे पुन उत्साह आ गया। पेशवा गद्दी के बहुत से पुराने सेवक ग्वालियर आ पहुचे। रावसाहब की सवारी पूर्ण शान शौकत के साथ नगर के बडे-बडे बाजारो से होकर महलो मे पहुची।

रावसाहब सिंहासनारूढ हो गये, परन्तु उनकी अभिलाषा ग्वालियर राज्य को हथियाना नही थी। ग्वालियर उनका पडाव मात्र था। वह दक्षिण पहुचकर स्वतंत्रता संग्राम को जीवित रखना चाहते थे।

रावसाहब ने पेशवा की गद्दी सभालने के उपरात ग्वालियर राज्य मे व्यवस्था स्थापित करने का सफल प्रयास किया।

काल्पी की पराजय के बाद ग्वालियर मे क्रांतिकारियो को पुन युद्ध सामग्री तथा धनराशि मिल गयी। रावसाहब को 50 या 60 बड़ी तोपें, सुदृढ दुर्ग, तोपखाना, बारुदखाना तथा सिंधिया की बची हुई सेना हाथ लगी। सिंधिया की सेना मे योग्यतम सैनिक थे। राव-साहब ने ग्रीष्म ऋतु मे ग्वालियर पर विजय प्राप्त की थी। वर्षा ऋतु आने वाली थी। वर्षा होने के पश्चात् अंग्रेजो की सेना का ग्वालियर पहुचना दुरूह कार्य था। एक महीने मे ग्वालि-यर स्थित पेशवा की सेना भी सुव्यवस्थित हो जाती। अंग्रेजो को इसी बात का भय था। अंग्रेज सेनापति ह्यू रोज ने एक क्षण भी व्यर्थ नही गवाया। एक जून को क्रांतिकारियो ने ग्वालियर पर विजय प्राप्त की थी। ह्यू रोज 6 जून को काल्पी से ग्वालियर की ओर बढे। 16 तारीख को वह मुरार पहुच गये। क्रांतिकारी सेना ने उनका डटकर मुकाबला किया। अंग्रेजो ने जगली मार्ग से पूर्वी पहाडियो के ऊपर से आक्रमण किया। रावसाहब की सेना के



रावसाहब बंदी रूप में ।

पाव उखड गये । 19 तारीख को ग्वालियर मे युद्ध हुआ । 20 तारीख को अग्रेजो ने ग्वालियर का किला फिर से जीत लिया । महाराजा सिंधिया पुन अपने महल मे आ गये । रावसाहब, तात्या टोपे तथा अन्य क्रातिकारी नेताओ को ग्वालियर छोड देना पडा ।

ग्वालियर के युद्ध मे 17 जून को झासी की रानी ने वीरगति प्राप्त की । रानी को फूलबाग ले जाकर उनकी अतिम क्रिया की गई । रानी के अतिम समय मे रावसाहब उनके साथ थे । क्रातिकारी नेताओ को रानी की मृत्यु से गहरा धक्का लगा । ग्वालियर की पराजय के पश्चात् क्रातिकारियो की ज्वारा अलीपुर मे फिर हार हुई । तदुपरात रावसाहब तथा तात्या टोपे चबल नदी को पार कर राजस्थान की ओर चले गये । वीर सेनानियो की पराजय हो गई थी, परन्तु उनकी आत्मा अब भी जीवित थी । वह स्वतन्त्रता सग्राम की चिनगारी को प्रज्वलित रखने के लिए फिर प्रयत्नशील हो गये । कर्नल होम्स क्रातिकारी नेताओ का लगातार पीछा कर रहे थे । वे लोग बूदी और मेवाड गये । उसके उपरात चबल नदी को पार कर झालावाड पहुच गये । झालावाड का राजा स्वय तो भाग गया, परन्तु उसने क्रातिकारी नेताओ को 5 लाख रुपये दिये । अब तात्या टोपे और रावसाहब इन्दौर की सीमा से केवल 50 मील दूर रह गये थे । उन्होने इन्दौर की सेना को अपने साथ मिलाकर क्राति को सफल बनाने का प्रयास किया । यदि रावसाहब की योजना सफल हो जाती, तो अग्रेजो के लिए भारी सकट उपस्थित हो जाता । अग्रेज सेना उनका निरतर पीछा कर रही थी और वह इन्दौर मे विजयी न हो सके । रावसाहब तथा तात्या टोपे ने बुदेलखड को अपना कार्यक्षेत्र बनाने का निर्णय किया । वह स्वय चदेरी पर आक्रमण करना चाहते थे और रावसाहब को झासी की तरफ बढना था । परन्तु यहा पर भी उन्हे सफलता नही मिली । रावसाहब इधर उधर भटकने के पश्चात् बासवाडा पहुचे । उन्हें आशा थी कि वहा का राजपूत राजा उनकी सहायता करेगा । अग्रेज सेना ने उन्हे यहा भी चैन से नही रहने दिया । अब रावसाहब और तात्या टोपे के साथ शहजादा फिरोज भी मिल गये ।

अग्रेज अधिकारी क्रातिकारियो से समझौता करना चाहते थे । पर रावसाहब ने समझौते को अस्वीकार कर दिया । सिरोज का जगल छोडने के पश्चात् रावसाहब उज्जैन गये तथा वहा से वह उदयपुर गये । उदयपुर मे उनकी पत्नी भी उनके साथ मिल गईं । वहा से वह दिल्ली गये, क्योकि वहा की भीड मे वह अग्रेजो से छुपकर रह सकते थे । वहा से वह ज्वालामुखी और कागडा गये । अत मे जब वह जम्मू मे चिनानी नामक स्थान पर अपनी पत्नी और बच्चे के साथ रह रहे थे, महाराष्ट्र के किसी व्यक्ति ने इसकी सूचना अग्रेजो को दे दी । स्यालकोट के डिप्टी कमिश्नर ने उन्हे तुरन्त बदी बना लिया । रावसाहब ने कहा कि उनके ऊपर किसी भी अग्रेज को मारने का अपराध नही है । मध्य भारत अथवा कानपुर मे इस प्रकार का कोई अपराध उनके विरुद्ध सिद्ध नही हो सका । परन्तु अग्रेजो को क्रातिकारियो से किसी न-किसी प्रकार का बदला लेना था । उन्होने उन्हे अपराधी घोषित किया तथा 20 अगस्त, 1862 को कानपुर मे फासी पर लटका दिया ।

# रामगढ़ की रानी

रामगढ की रानी जैसी वीरागनाओ ने देश के मस्तक को गर्व से उन्नत कर दिया है। 1857 मे क्राति की ज्वाला समस्त देश मे धधक उठी थी और उसका प्रभाव मध्य प्रदेश मे भी अनुभव किया जा सकता था। मडाला प्रदेश के समस्त छोटे छोटे राजाओ ने विद्रोह का झण्डा खडा कर दिया था। वदूकधारी गौड इन राजाओ के साथ उठ खडे हुए थे। विद्रोहियो का मुख्य केन्द्र रामगढ और सौहागपुर था। रामगढ के राजा विक्रमाजीत क्रातिकारियो का नेतृत्व कर रहे थे। इतिहासकार शशिभूषण चौधरी के अनुसार—"राजा विक्रमाजीत उस क्षेत्र के प्रमुख विद्रोही थे।"

राजा विक्रमाजीत की मृत्यु के उपरात अग्रेजो ने रामगढ के राज्य को अपने अधिकार मे ले लिया। रामगढ की रानी का इकलौता पुत्र मानसिक रोग से पीडित था। राज्य का शासन-प्रबध कोर्ट-आफ-वार्ड द्वारा किया जाने लगा। अग्रेजो ने राजकीय-परिवार के सदस्यो के लिए पेंशन बाध दी थी। रामगढ की रानी को अग्रेजो का व्यवहार अपमानजनक लगा। रानी ने कई बार विरोध मे अपनी आवाज उठायी परन्तु कोई फल न निकला। अन्त मे वीर राजा की उस वीर पत्नी ने मडाला-क्षेत्र मे क्राति की बागडोर अपने हाथ मे ले ली। रामगढ की रानी ने रामगढ के तहसीलदार को हटा दिया तथा शासन व्यवस्था अपने हाथो मे ले ली। जबलपुर के कमिश्नर को यह समाचार मिला तो वह आतकित हो उठे। उन्होने रामगढ की रानी को मडाला के डिप्टी-कलेक्टर से मिलने का आदेश दिया। विद्रोही रानी पर इस आदेश का कोई प्रभाव नही पडा। उन्होने पूर्ण उत्साह के साथ युद्ध की तैयारी आरभ कर दी। उन्होने रामगढ के किले की मरम्मत करवायी तथा आसपास के राजाओ व जमीदारो से सपर्क स्थापित कर अग्रेजो के विरुद्ध सहायता मागी।

अग्रेज सेनाधिकारी रानी की गतिविधियों से आतकित हो उठे। कैप्टन वैडिंग्टन अपनी सेना के साथ मडाला क्षेत्र के विद्रोह को दबाने के लिए आगे बढे। उन्होंने शाहपुर के ठाकुरो माओसिंह व हिम्मतसिंह को युद्ध मे पराजित कर दिया। तदुपरान्त अप्रैल 1858 मे वह रामगढ की ओर बढे। रानी युद्ध के लिए तैयार थी। वह किले से बाहर निकल आई और उन्होने स्वय सेना का सचालन किया। घमासान युद्ध हुआ। रानी की वीरता अभूतपूर्व थी। रानी को आशा थी कि रीवा राज्य उनकी सहायता करेगा, परन्तु वह रियासत अग्रेजो से मिल गयी। यह देश का दुर्भाग्य था कि जहा समस्त राष्ट्र को एकजुट होकर अग्रेजो के विरुद्ध लडना चाहिए था,

वहा कुछ राज्य अंग्रेजो की सहायता कर रहे थे। रामगढ की रानी हतोत्साहित नही हुई। वह रण-चण्डिका बनकर सिपाहियो को प्रेरणा देती रही, किन्तु अन्त मे उनकी पराजय हुई। रानी ने युद्ध क्षेत्र को छोड दिया और पास के जगलो मे शरण ली। रानी हारकर भी नही हारी। वह जगलो मे छुपी रहती थी और बार-बार अंग्रेजो के शिविर पर आक्रमण करती थी। किन्तु अन्त मे रानी के पास कोई उपाय नही बचा। वह सब तरफ से घिर गयी थी और उनका पकडा जाना निश्चित सा हो गया था। रामगढ की रानी ने देश की गौरवशाली परम्परा के अनुरूप अपने आत्म सम्मान की रक्षा के लिए तलवार भोंककर, आत्मघात कर लिया। मृत्यु के समय उस वीर रानी ने स्वीकार किया कि उन्होने ही मण्डाला क्षेत्र के लोगो को क्राति की प्रेरणा दी थी।

इतिहासकार शशिभूषण चौधरी ने रामगढ की रानी की तुलना रानी दुर्गावती से की है। रानी की वीरता एव बलिदान ने देश के इतिहास मे एक और स्वर्णिम पृष्ठ जोड दिया।

# इंजीनियर मोहम्मद अली खान

इंजीनियर मोहम्मद अली खान की स्मृति अतीत के गर्भ मे खो गई है, परन्तु उनका वलिदान नि सदेह अभूतपूर्व था।

फरवरी 1858 का अत था। अग्रेजो की सेना ने लखनऊ से कानपुर तक अपना पडाव डाल रखा था। सर लुगाड तथा ब्रिगेडियर होप का शिविर उन्नाव के पास था। अग्रेज सेना को उस क्षेत्र मे अपना पडाव डाले हुए दस दिन हो चुके थे। उनकी सेना किसी भी क्षण लखनऊ की ओर कूच कर सकती थी और क्रातिकारियो की विजय को पराजय मे वदल सकती थी। दस दिन से सैनिक शिविर मे पडे पडे अग्रेज अधिकारी वहुत ऊव का अनुभव कर रहे थे। चारो ओर नितात सूनापन था। इस वातावरण को भेदती हुई कभी-कभी गोलियो की आवाज सुनाई देती थी। ऐसी विकट परिस्थितियो मे सार्जेन्ट फाब्स माईकेल को एक अवाज सुनाई दी। *कोई व्यक्ति मिठाई वेच रहा था—मिठाई वाला, मिठाई वाला! आलू-बुखारे की केक वाला।* पहले चखिए, फिर खरीदिए। अग्रेज अधिकारी प्रतिदिन राशन का मास और विस्कुट खाते खाते थक चुके थे। उन्हे मिठाई वाले का आगमन सुखद परिवतन लगा। मिठाई वाला युवक था और देखने मे वहुत आकर्षक था। उसका रग गोरा था। उसने विल्कुल झकाझक सफेद कपडे पहन रखे थे। उसने अपनी मूछो तथा काले, घुघराले वालो को मुसलमानो की भाति सफाई से काट रखा था। उसका माथा चौडा था और आखो से बुद्धिमत्ता टपक्ती थी। वह शिविर के साधारण भारतीय कमचारियो से विल्कुल भिन्न था। मिठाई वाले के साथ एक व्यक्ति उसकी टोकरी उठाने के लिए भी था। यह व्यक्ति देखने मे विल्कुल अपराधियो जैसा लग रहा था तथा उसका नाम मिक्की था। फाब्स माईकेल को लगा कि यह दोनो व्यक्ति विल्कुल अपरिचित है। इसलिए उन्होने मिठाई वाले से पूछा—"क्या आपके पास सैनिक शिविर मे आने के लिए अनुमति पत्र है। मिठाई वाले ने तत्परता से उत्तर दिया—"सार्जेंट साहव, मेरे पास स्वय ब्रिगेडियर मेजर होप का दिया हुआ पास है। मेरा नाम जानी ग्रीन है। मैं सैनिक-शिविर मे खानसामा का काय करता था। फाब्स माईकेल जानी ग्रीन की इग्लिश से वहुत अधिक प्रभावित हुए। उन्होने पूछा—"आपको इतनी अच्छी इग्लिश वोलनी कैसे आ गयी।" जानी ग्रीन ने उत्तर दिया—"मेरे पिता यूरोपीयन पलटन मे खानसामा थे। मुझे आरभ से इग्लिश वोलने का अभ्यास है।" फाब्स माईकेल की मेज पर अखबार पडे हुए थे। जानी ग्रीन ने उन्हे उठाकर पढा और पूछा—"मैं यह जानने के लिए उत्सुक हू कि अग्रेज क्राति के विषय मे क्या सोचते है?" वह वहुत देर तक वातचीत करते

रहे। मिठाई वाला यह जानने को उत्सुक था कि अंग्रेजो की सैन्यशक्ति कितनी है, वे लोग लख-नऊ की ओर कब कूच करना चाहते हैं और गर्मी का अंग्रेजो की नई सैनिक टुकड़ियो पर क्या प्रभाव पड़ेगा। जानी ग्रीन का बात करने का ढंग इतना आकर्षक था कि सार्जेंट फार्ब्स माई-केल को कोई सदेह नही हो सका।

अगले दिन पता चला कि जानी ग्रीन और कोई नही, इंजीनियर मोहम्मद अली खान थे। वह लखनऊ से मिठाई वाले का भेष बनाकर, अंग्रेजो के शिविर मे गुप्तचरी करने गये थे। मोहम्मद अली खान पकड़े गये और उन्हे फासी की सजा दी गयी। उस समय अधिक रात हो चुकी थी, इसलिए उन्हे फार्ब्स माईकेल के पास भेज दिया गया। प्रात काल का समय फासी के लिए निश्चित किया गया।

फार्ब्स माईकेल जानी ग्रीन (मोहम्मद अली खान) से वास्तविक रूप मे प्रभावित हुए थे। वह उनके प्रारब्ध के विषय मे जानकर द्रवित हो उठे। कुछ अंग्रेज सैनिक बाजार से सूअर का मास खरीद कर लाये थे। वह सूअर का मास मोहम्मद अली खान को खिलाकर धर्म-भ्रष्ट करना चाहते थे। फार्ब्स माईकेल ने अंग्रेज सैनिको को कड़ा निर्देश दिया कि बदी को मास खाने के लिए बाध्य न किया जाय, क्योकि यह अंग्रेजो की गौरवमयी परपरा के विरुद्ध है। मोहम्मद अली खान का हृदय अंग्रेज सेनापति के प्रति कृतज्ञता से भर उठा। उन्होने फार्ब्स माईकेल से कहा—"तुमने मुझ पर दया की है। अल्लाह तुम्हारी रक्षा करेगा। फार्ब्स माईकेल ने मोहम्मद अली खान की हथकड़िया खुलवा दी और उन्होने शाम की नमाज पढी। अंग्रेज सेनापति ने मोहम्मद अली खान को हुक्का पीने को दिया। अंग्रेज सेनापति और मोहम्मद अली खान मे रात-भर मित्रतापूर्वक बातचीत होती रही। फार्ब्स माईकेल को अपने बदी से स्नेह हो गया था। मोहम्मद अली खान ने उसे अपनी कहानी सुनाई—"मै गुप्तचर नही हू। मैं बेगम हजरत महल की सेना मे अधिकारी के पद पर काय करता हू। मैं वहा की सेना मे मुख्य अभियता हू। मैं आप लोगो की सैन्य शक्ति के विषय मे निश्चित जानकारी लेने के लिए यहा आया था। मैं कल सुबह तक वापस पहुच जाता। मुझे सूचना मिल चुकी थी। परन्तु मैं एक बार फिर उन्नाव आ गया। मैं देखना चाहता था कि अंग्रेज सेना ने आगे की ओर कूच करना आरभ कर दिया है अथवा नही। किसी व्यक्ति ने मेरी शिकायत कर दी, जो स्वय अंग्रेज अधिकारियो के रोप से अपने को बचाना चाहता था।

उन्होने फार्ब्स माईकेल से कहा—आप मेरी कहानी सुनना चाहते हैं और अपने मित्रो को लिखना चाहते है। मुझे कोई आपत्ति नही है। मेरा जन्म रुहेलखड के सभ्रान्त परिवार मे हुआ था। मेरी प्रारभिक शिक्षा बरेली कालेज मे हुई थी। वहा पर मैंने इंग्लिश मे सर्वाधिक अक प्राप्त किये। तदुपरात मैने रुडकी के इंजीनियरिंग कालेज मे प्रवेश ले लिया। वहा



मोहम्मद अली खान अपनी कहानी माईकेल को सुनाते हुए।

भी मुझे प्रशसनीय सफलता मिली। मैंने इजीनियरिंग की परीक्षा मे सभी यूरोपीयन विद्यार्थियो से कही अधिक अक प्राप्त किए और मेरी इस सफलता से देश का मस्तक गर्व से उन्नत हो गया।" अपनी कहानी को आगे सुनाते हुए उन्होने बताया कि वह अपने और अपने देश की मान-प्रतिष्ठा के लिए सदैव जागरूक थे। रुडकी से इजीनियरिंग की परीक्षा मे उत्तीर्ण होने के उपरात वह अग्रेज कपनी की नौकरी मे आ गये। उन्हे सेना मे जमादार का पद देकर पहाडी क्षेत्र मे भेज दिया गया। कहने के लिए तो वह कपनी के अधिकारी थे, परन्तु वास्तविकता इससे भिन्न थी। उन्हे एक अग्रेज सार्जेंट के अधीन कर दिया गया था, जो पशुबल को छोडकर योग्यता मे मोहम्मद अली खान के निकट कही नहीं ठहरता था। अग्रेज सार्जेन्ट दभी और स्वार्थी था। वह बात बात पर मोहम्मद अली खान को अपमानित करता था। यह स्थिति उनके लिए असहनीय थी।

अत उन्होने कपनी की अपमानजनक नौकरी छोड दी और अपने घर चले गये। वह अवध के नवाब के पास काम करना चाहते थे। उसी समय नेपाल के राणा जगबहादुर इग्लैण्ड जाना चाहते थे तथा उन्हे एक सेक्रेटरी की आवश्कता थी। मोहम्मद अली खान को इग्लिश मे पूर्ण दक्षता प्राप्त थी तथा उनका राजकीय परिवारो से सबध था। उन्हे नौकरी मिल गयी और वह राणा जगबहादुर के साथ प्रथम बार इग्लैण्ड गये। वहा अग्रेजो की सेना की 43वी पलटन ने उनका स्वागत किया। मोहम्मद अली खान ने स्वय लिखा है—"उस समय मुझे क्या पता था कि एक दिन मैं अग्रेजो द्वारा बदी बना लिया जाऊगा। परन्तु प्रारब्ध को कौन जानता है और उससे कौन लड सकता है।"

बाजीराव द्वितीय की मृत्यु के उपरात अग्रेज अधिकारियो ने नानासाहब को उनका उत्तराधिकारी मानने से इकार कर दिया था। अत नानासाहब ने अपनी पेंशन के विषय मे अपील करने के लिए अजीमुल्ला खा को इग्लैण्ड भेजा। अजीमुल्ला खान को विश्वास था कि वह इग्लैण्ड जाकर डलहौजी के निर्णय को बदलवा देंगे। मोहम्मद अली खा भी अजीमुल्ला खा के साथ इग्लैंड गये थे। इन लोगो ने इग्लैंड मे 50,000 पौड खर्च कर दिये परन्तु अपने लक्ष्य मे सफलता प्राप्त नही कर सके। कास्टैंटीनोपल होते हुए 1855 मे ये लोग भारत लौट आये। यह लोग क्रीमिया भी गये और उन्होने 18 जून को युद्ध मे अग्रेजो को पराजित होते देखा। मोहम्मद अली खान और अजीमुल्ला खा को वहा एक रशियन एजेंट मिले। उन्होने इन दोनो को आश्वासन दिया कि यदि यह लोग भारत मे अग्रेजो के विरुद्ध विद्रोह करने मे सफल हो गये, तो वह उनकी सहायता करेंगे। यही वह समय था जब मोहम्मद अली खान और अजीमुल्ला खा ने अग्रेजो को अपने देश से निकाल देने का निर्णय लिया। देश प्रेम के ये मतवाले अपने लक्ष्य मे कुछ अश तक सफल हुए और उन्होने स्वतत्रता प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त कर दिया।

विदेश से लौटने के उपरात मोहम्मद अली खान पूर्ण उत्साह के साथ स्वतन्त्रता-सग्राम मे कूद पडे। जब वह लौटकर आये तो देश-भर मे क्राति के बादल मडरा रहे थे। वह अपनी पत्नी तथा बच्चो को सुरक्षित स्थान पर छोडने के लिए रुहेलखड मे अपने गाव चले गये। वही पर उन्होने सुना कि क्राति का शुभारभ हो गया है। मोहम्मद अली खान तुरन्त बरेली पहुचे और क्रातिकारी सेना मे सम्मिलित हो गये। बरेली की कुछ सेना, सेनापति बख्त खा के अन्तगत दिल्ली के क्रातिकारियो की सहायता के लिए वहा पहुची। इस सेना के साथ मोहम्मद अली खान भी दिल्ली पहुच गये। दिल्ली मे वह मुख्य अभियता नियुक्त हुए। कपनी के कुछ और इजीनियरो ने भी विद्रोह कर दिया था तथा मेरठ से दिल्ली पहुच गये थे। मोहम्मद अली खान ने इन सबकी सहायता से दिल्ली की सैनिक सुरक्षा का प्रबध किया। मोहम्मद अली खान सितम्बर तक दिल्ली रहे और वहा की क्रातिकारी गतिविधियो मे भाग लेते रहे। तभी दिल्ली का पतन हो गया और मोहम्मद अली खान बची-खुची क्रातिकारी सेना के कुछ उत्साही सेनानियो को अपने साथ लेकर लखनऊ पहुचे। शहजादा फिरोजशाह और बख्त खा भी 30,000 सेनानियो के साथ लखनऊ की ओर बढे। यह सेना मथुरा की ओर से लखनऊ की ओर बढी। मोहम्मद अली खान ने मथुरा के पास सेना को नदी पार करने के लिए नावो का पुल बनाया। लखनऊ पहुचकर वह फिर मुख्य अभियता के पद पर नियुक्त हो गये। नवबर के महीने मे क्रातिकारियो ने रेजीडेसी के चारो ओर घेरा डाल रखा था। मोहम्मद अली खान ने सिकदराबाद मे तीन हजार सैनिको को तैनात कर रखा था। सिकदराबाद लखनऊ की क्राति का प्रमुख स्थान था। मोहम्मद अली खान ने वहा पर बडे उत्साह के साथ क्राति का हरा झडा फहरा दिया था और युद्ध के लिए आदेश दिए थे। जब अग्रेजी सेना सिकदराबाद पहुची तो उन्होने क्राति का हरा झडा उतार दिया, और सब सैनिको का मौत के घाट उतार दिया। मोहम्मद अली खान ने स्वय यह रक्तपात शाहनजफ से देखा।

जब रात बीत चुकी थी, मोहम्मद अली खान की कहानी भी खत्म हो गई थी। उन्होने फासी के फदे पर झूलने से पहले अग्रेज सेनापति से कहा—"शुक्र खुदा का। हमने अपना लक्ष्य प्राप्त कर लिया है। कपनी के राज का अत हो गया है। हमारा बलिदान व्यर्थ नही जाएगा। हम अग्रेजो को देश से पूरी तरह बाहर नही निकाल पाये परन्तु अग्रेजो की पार्लियामेट का सीधा प्रशासन देश के लिए अधिक हितकर होगा। मेरे देश के शोषितवासियो के सम्मुख आलोकमय भविष्य है, यद्यपि उसे देखने के लिए मैं जीवित नही रहूगा।" प्रात काल की वेला मे सूर्य की किरणो की ललछोई से आकाश आलोकमय हो उठा था। मोहम्मद अली खान की इस विश्व से विदा की अन्तिम वेला आ पहुची थी। एक क्षण को वह अपनी पत्नी और बच्चो को याद कर विचलित हो उठे, जो उनके दुर्भाग्य से सर्वथा अपरिचित थे। शीघ्र ही वह सयत हो गये। उन्होने कहा कि मैंने इतिहास पढा है और मुझे कठिनाई के क्षणो मे अविचलित रहना चाहिए। फाब्स माईकेल ने मोहम्मद अली खान के धर्म की रक्षा की थी। कृतज्ञता के रूप मे

उन्होने अपने वालो मे से एक अगूठी निकालकर अग्रेज सेनापति को भेंट की। उन्होने कहा—"मेरे पास इस अगूठी के अतिरिक्त कुछ नही है। यह अगूठी एक धर्म-गुरु की दी हुई है। यह अगूठी रण मे तुम्हारी रक्षा करेगी।"

अगले दिन प्रात काल की वेला मे इजीनियर मोहम्मद अली खान को फासी पर लटका दिया गया। इस प्रकार उन्नाव के सैनिक-शिविर मे एक बेहद सुन्दर व्यक्तित्व के जीवन की कहानी का आरभ होते ही अत हो गया।

# सुरेन्द्र साई

सबलपुर जिला उडीसा मे स्थित है। पहले वह मध्य-प्रात का भाग था। सबलपुर का राज्य भी डलहौजी की अपहरण नीति का शिकार हो गया था। इतिहासकार सुरेन्द्रनाथ सेन के अनुसार सबलपुर का राज्य-परिवार अधिक सम्पन्न नही था। 1826 मे अग्रेजो ने सबलपुर पर अपना अधिकार कर लिया। उन्होंने रानी मोहन कुमारी को सबलपुर की राजगद्दी पर बैठा दिया। सुरेन्द्र साई भी राज्य के प्रत्याशी थे, क्योकि वह वहा के पहले राजा मधुकर साई के वशज थे। सुरेन्द्र साई ने इस अन्याय के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। अग्रेजो ने घबराकर रानी मोहन कुमारी को राजगद्दी से उतार दिया और उनके स्थान पर नारायणसिंह को राजगद्दी पर बैठा दिया। सुरेन्द्र साई इससे सतुष्ट नही हुए और वह अग्रेजो के विरुद्ध निरतर युद्ध लडते रहे। 1839 मे उन्होने रामपुर के शासक की हत्या कर दी, क्योकि वह अग्रेजो का समर्थक था। इस अपराध के कारण उन्हे आजन्म कारावास की सजा मिली। क्राति के समय वह इसी अपराध की सजा हजारीबाग बदीगृह मे काट रहे थे। सबलपुर के शासक नारायणसिंह के कोई पुत्र नही था। डलहौजी की नीति के अनुसार सबलपुर को अग्रेजी राज्य मे मिला लिया गया।

1857 मे सिपाहियो ने हजारीबाग मे विद्रोह कर दिया और समस्त बदियो को कारागृह से छुडा लिया। सुरेन्द्र साई, उनके भाई उद्धवतसिह तथा पुत्र मित्र भानु बदीगृह से निकलकर सबलपुर पहुचे। उन्होने पुराने किले पर अपना अधिकार कर लिया और विद्रोह का झडा खडा कर दिया।

सबलपुर मे विद्रोह की ज्वाला बहुत तीव्र थी। सबलपुर के बहुत से जमीदार अग्रेजो की कर नीति से असतुष्ट थे। उन्होने राज्य-कर को व्यर्थ मे ही ½ हिस्सा बढा दिया था। इसके अतिरिक्त उन्होने भूमि सबधी विवादो का निर्णय करने के लिए कुछ अधिकारी नियुक्त किये थे। वे इसे अन्याय पूर्ण समझते थे। लेकिन अग्रेज इस नीति मे फेर-बदल करने को तैयार नही थे। ये अधिकारी भ्रष्ट थे, रिश्वत लेते थे, जिससे जनता सत्रस्त थी। अग्रेज अधिकारी "नजर" लेने मे विश्वास रखते थे और किसान भूखे मर रहे थे। सबलपुर के ब्राह्मण राची मे अग्रेज अधिकारियो से मिले और अपनी दुर्दशा का वर्णन किया, परन्तु कोई भी हल नही निकला। 1845 मे भूमि-कर का पुनर्मूल्याकन किया गया। राज्य सरकार ने भूमि-कर और अधिक बढा दिया।



सुरेन्द्र साई ने अन्याय के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी।

हजारीबाग के कारागृह से मुक्त होने के उपरात सुरेन्द्र साई ने सबलपुर मे जमीदारो तथा जनता की सहायता से समानान्तर सरकार की स्थापना की। सुरेन्द्र साई एव उनके क्रातिकारी साथियो ने एक सभा बुलाई। वे हिंसा द्वारा भी अग्रेजो को सबलपुर मे निकालकर अपना राज्य स्थापित करना चाहते थे। सर रिचर्ड टैम्पल ने सबलपुर के डिप्टी कमिश्नर को पत्र लिखा कि अग्रेज अधिकारी सुरेन्द्र साई को पकडने मे असमर्थ हैं तथा समस्त क्षेत्र मे अराजकता फैली हुई है।

सबलपुर के प्रमुख जमीदारो ने अपने-अपने किलो को अच्छी प्रकार से सुरक्षित कर लिया। क्रातिकारियो ने तीन-तीन, चार-चार मील की दूरी पर सैनिक चौकियो की स्थापना कर ली। क्रातिकारियो को दड देने के लिए जो भी सैनिक टुकडिया आती थी उनको घने जगलो मे घेर लिया जाता था जिससे उनकी भयकर क्षति होती थी। दिसबर के मध्य तक कलकत्ता और बम्बई के मध्य सचार साधनो को पूरी तरह नष्ट कर दिया गया। सुरेन्द्र साई एव उनके साथियो ने डाकघरो को जला दिया तथा कलकत्ता और सबलपुर के सचार साधनो को भी काट दिया। समस्त क्षेत्र मे घना जगल था तथा दुगम पहाडिया थी। घने जगलो मे युद्ध होता रहा, परन्तु अग्रेजी सेना प्रमुख क्रातिकारियो को पकडने में असमथ रही।

9 जनवरी, 1858 को सुरेन्द्र साई के भाई छबील साई की युद्धभूमि मे मृत्यु हो गयी। क्रातिकारियो ने पहाडी दर्रों पर अपना अधिकार कर रखा था। झारघाटी के दर्रे पर सुरेन्द्र साई के दूसरे भाई उद्धवतसिंह का अधिकार था। अग्रेज इस गिरि-पथ को खोलना चाहते थे, परन्तु उनके सब प्रयत्न व्यर्थ रहे। एक स्थान पर पहाडियो के ऊपर, घने जगल के मध्य, लगभग डेढ हजार क्रातिकारी एकत्र थे। अग्रेजो ने उन पर धावा बोल दिया, परन्तु सफलता नही मिली। 14 फरवरी, 1858 को सिंहघोरा के दर्रे पर युद्ध मे कैप्टन गुडब्रिज की मृत्यु हो गई। अगले दिन वारलो ने उसी पहाडी दर्रे पर एकत्रित क्रातिकारियो पर आक्रमण किया, परन्तु उनकी शक्ति को देखकर वह विस्मित रह गया। विप्लवकारियो ने जगलो से घिरी हुई दो पहाडियो के बीच के सकीर्ण दर्रे पर अपना अधिकार कर रखा था। उन्होने पहाडियो के बीच मे सकुचित मार्ग पर 7 फुट ऊचा और 30 फुट लम्बा पत्थर फेंक रखा था। उन्होने जगल को काटकर लकडी इकट्ठी कर रखी थी, जिससे इस मार्ग पर तुरत आग लगायी जा सके।

सबलपुर की जनक्राति को दबाने के लिए अग्रेज अधिकारी बेहद उत्सुक थे। 11 मार्च, 1858 को उन्होने एक नियम लागू किया, जिसके अनुसार सबलपुर मे कोई भी व्यक्ति किसी प्रकार का हथियार नही रख सकता था। उन्हे आशा थी कि इस प्रकार वे विद्रोह का दमन करने में सफल होगे।

अंग्रेज अधिकारी सुरेन्द्र साई को पकड़ने मे अब तक असफल रहे थे। सबलपुर के जगलो मे क्रांति की ज्वाला धधकती रही। 1859 के घोषणा पत्र के अनुसार अंग्रेज आत्म-समपण करने पर क्रांतिकारियो को क्षमा करने के लिए तैयार थे। सुरेन्द्र साई ने उस समय भी आत्म-समर्पण नही किया। 1861 मे मेजर इम्पे सबलपुर के अधिकारी बनकर आये। वह क्रांतिकारियो से समझौता करने के पक्ष मे थे। उन्होने कहा कि समस्त क्रांतिकारियो को क्षमा कर दिया जाएगा तथा उनकी जब्त सपत्ति वापस कर दी जाएगी, परन्तु सुरेन्द्र साई एव उनके परिवार के लोगो के अपराध अक्षम्य हैं। उन्होने यह भी घोषणा की कि सुरन्द्र साई, उनके पुत्र मित्र भानु एव भाई उद्धवर्तसिह को माफी नही दी जा सकती। बहुत से क्रांतिकारियो ने आत्म-समपण करना अस्वीकार कर दिया। उन्होने कहा कि जब तक सबलपुर मे सुरेन्द्र साई के राज्य की स्थापना नही होगी, तब तक वह आत्म-समपण नही करेंगे। कमल सिंह, सुरेन्द्र साई के साथी थे। वह सबलपुर के डिप्टी कमिश्नर को विद्रोहपूर्ण पत्र लिखकर भेजते रहते थे। वह गावो को जला देते थे अथवा लूट लेते थे। जो भी गाव प्रधान जमीदार अंग्रेजो का साथ देता था, उसकी हत्या कर दी जाती थी। चारो ओर अशांति थी। जो क्रांतिकारी अंग्रेजो की अथवा उनके समर्थको की हत्या करते थे, उन्हे पकडवाने म ग्रामवासी अंग्रेजो की सहायता नही करते थे। अत मे 23 जनवरी, 1864 को सबलपुर के डिप्टी कमिश्नर सुरेन्द्र साई एव उनके क्रांतिकारी सहयोगियो को पकडने मे सफल हुए। सुरेन्द्र साई पर न्यायालय मे मुकदमा चलाया गया। परन्तु कोई भी अपराध सिद्ध नही हो सका। अंग्रेज उन्हे रामपुर ले गये। अंग्रेजो ने अन्यायपूर्ण ढग से सुरेन्द्र साई को कारागह मे ही अधा कर दिया और सभवत वही पर चुपचाप मार डाला।

# वृन्दावन तिवारी

वृन्दावन तिवारी के नाम से लगभग समस्त राष्ट्र अपरिचित है। उन्होने धम और राष्ट्र के लिए अपने को वलिदान कर दिया। ऐसे वीर सेनानी को श्रद्धाजलि देना अनिवाय है।

वृन्दावन तिवारी पुलिस मे थाना वरकदाज थे। वह ब्राह्मण थे और नगर प्रशासन से सम्बद्ध थे। मिदनापुर के कारागृह मे वदियो मे असतोप था। उस समय मिदनापुर की जेल मे लगभग 800 कैदी थे। 100 कैदियो पर डाके आदि के भीपण अपराधो के लिए मुकदमा चल रहा था। इन कैदियो को हथकडी-वेडी नही लगायी गयी थी, परन्तु इन्हे आजन्म कारावास की सजा मिलना अनिवार्य सा था। उस समय मिदनापुर के मजिस्ट्रेट एस० लुशिग्टन थे। एक दिन वह खाने के समय बदीगृह के दौरे पर आये। उन्हे यह देखकर आश्चय हुआ कि भयकर अपराधी एव साधारण अपराधी विना रोक-टोक आपस मे मिल जुलकर रह रहे थे। लुशिग्टन ने आज्ञा दी कि प्रत्येक कैदी को अपने वार्ड मे खाना मिलेगा। अगले दिन 51 कैदियो ने खाना खाने से इकार कर दिया। लुशिग्टन तथा एक अन्य सेनाधिकारी जेल मे आये और तीन चार वदियो को बेंत लगाने की आज्ञा दी। कारागृह के कुछ वदियो ने खाना लेना स्वीकार कर लिया।

अगले दिन थाना वरकदाज वृन्दावन तिवारी मिदनापुर के सैनिक शिविर मे आये। उन्होने सैनिको को सत्य से अवगत कराया। उन्होने ओजपूर्ण वाणी मे कहा—"सैनिक भाइयो, कल लुशिग्टन एव एक सेनाधिकारी कारागृह मे आये थे। उन्होने बदियो को गाय का मास और सुअर का मास खाने के लिए वाध्य किया। क्या आप इस अपमान को सहेगे ?" वृन्दावन तिवारी के हाथ मे तलवार थी। सैनिको को जागृत करने के उपरात वृन्दावन तिवारी सैनिक अधिकारियो के पास गये। उनके अतर मे भी उन्होने अग्रेजो के विरुद्ध क्राति-कारी भावना भरने का प्रयास किया। वृन्दावन तिवारी के शब्दो मे क्राति का चिर सत्य निहित था। उन्होने कहा—"शक्ति आपके हाथ मे है। उठो, जागो, अग्रेजो के विरुद्ध अपने लक्ष्य को कार्यान्वित करो।" वृन्दावन तिवारी ने खजाने के रक्षको के सम्मुख भी उत्साहपूर्ण भाषण दिया। उन्होने कहा कि हिन्दू और मुसलमान दोनो को अग्रेजो के विरुद्ध उठ खडा होना चाहिए। 4 जून, 1857 को कर्नल फास्टर ने, जो शेखावत वटालियन के कमाडर थे, भारत सरकार के सेक्रेटरी को लिखा—"थाना बरकदाज वृन्दावन तिवारी ने सिपाहियो मे



अंग्रेज सैनिकों ने वृंदावन तिवारी को पकड़ लिया ।

विद्रोह की भावना जगाने का प्रयास किया, जबकि समस्त देश की स्थिति वैसे ही सामान्य नही है। उसके इस कुकृत्य के लिए शीघ्र ही प्राण दड देने की अनुमति दी जानी चाहिए। मैं ऐसे व्यक्ति को फासी देने मे एक क्षण को भी नही हिचकूगा।" बटालियन के दो सिपाहियो ने वृन्दावन तिवारी को पकड लिया। उनकी तलवार रखवा ली और अग्रेज अधिकारियो के सुपुर्द कर दिया। वृन्दावन तिवारी के ऊपर सैनिक न्यायालय मे मुकदमा चला। उनके ऊपर आरोप लगाया गया कि उन्होने शेखावत बटालियन के सिपाहियो मे धार्मिक भावनाओ का आधार लेकर विद्रोह की भावना जागृत की तथा सिपाहियो को क्राति का पाठ पढाया। इस अपराध के लिए वृन्दावन तिवारी को 8 जून, 1857 को फासी पर लटका दिया गया।

अग्रेजो ने क्रातिकारी वृन्दावन तिवारी को फासी पर लटका दिया, परन्तु क्राति की भावना चिरजीवी है। उसे कोई दवा नही सकता, उसे कोई मार नही सकता।

# अमझेरा के राजा बख्तावर सिंह

मई 1857 मे क्राति का आरभ हुआ और जुलाई 1857 तक समस्त मालवा मे क्राति की लपटें फैल चुकी थी। क्राति के आरभ से जून 1858 तक मालवा के किसी-न किसी क्षेत्र पर क्रातिकारियो का आधिपत्य रहा। झासी की रानी, बादा के नवाब, मदसौर के शहजादा फिरोज, इदौर के सादत खान तथा अमझेरा के राजा बख्तावर सिंह अग्रेजो के विरुद्ध उठ खड हुए थे। इन सबका एक ही लक्ष्य था—अग्रेजो का विनाश। अपने देश और धर्म की रक्षा के लिए, सिर पर कफन बाधकर, ये क्रातिकारी नेता रण-क्षेत्र मे कूद पडे। धीरे धीरे ग्वालियर, इदौर, अमझेरा, धार और मदसौर स्वतन्त्र हो गये। मालवा मे सवप्रथम अमझेरा के राजा बख्तावर सिंह ने क्राति का शखनाद बजाया तथा उन्होने हसते हसते फासी के फदे को चूम लिया।

16वी शताब्दी मे जोधपुर के राजा रामसिंह ने अमझेरा राज्य की स्थापना की थी। अमझेरा, मालवा मे छोटा-सा राज्य था। यह विध्याचल की पहाडियो पर 1,890 फुट की ऊचाई पर स्थित था। 18वी शताब्दी मे अमझेरा का राजा ग्वालियर के सिंधिया के अधीन हो गया था। 1818 मे मालवा मे अग्रेजो का अधिकार स्थापित हो गया। मालवा के राज्यो मे अरब सिपाहियो का प्रभुत्व था तथा इन राज्यो पर मराठो का नियत्रण भी था। जान मैलकम ने अमझेरा के राजा तथा ग्वालियर के सिंधिया के बीच एक समझौता कराया। अग्रेज अधिकारियो ने सिंधिया को आश्वासन दिया कि अमझेरा के राजा की ओर से 35,000 रुपये प्रतिवर्ष कर के रूप मे सिंधिया को दिये जाएगे। सिंधिया ने अपनी सेना को अमझेरा राज्य से हटा लिया तथा अमझेरा के राजा ने पूर्ण राजनैतिक स्वतत्रता प्राप्त कर ली। जिस समय क्राति का आरभ हुआ, राजा बख्तावर सिंह अमझेरा के स्वतत्र शासक थे। वह वीर, कर्तव्यनिष्ठ तथा न्यायप्रिय राजा थे। राजा बख्तावर सिंह ने मालवा से अग्रेजो के राज्य को समाप्त कर देने का बीडा उठाया। वह शीघ्र से शीघ्र कपनी के राज्य का अत करना चाहते थे।

राजा बख्तावर सिंह ने 3 जुलाई, 1857 को भोपावर पर आक्रमण कर दिया। अग्रेजो के वकील ने 2 जुलाई के लगभग चार बजे राजनैतिक एजेंट की आज्ञा के बिना ही भोपावर छोड दिया। अमझेरा के दीवान गुलाबराय सैनिको सहित भोपावर पहुचे। मडाला के ठाकुर भवानीसिह भी तोपो सहित वहा पहुच गये। उन्होने राजकीय अधिकारियो को बदी बना



राजा वख्तावर सिंह भोपावर पर आक्रमण करते हुए।

लिया। अंग्रेजो के झंडे को फाड दिया और उखाडकर फेंक दिया। क्रांतिकारियो ने सरकारी कागज-पत्रो को अपने अधिकार मे ले लिया तथा कुछ को वही जलाकर राख कर दिया। भोपावर मे अंग्रेजो के पास केवल भील सैनिक टुकडी थी। भील सैनिको ने अंग्रेजो की सहायता करना अस्वीकार कर दिया तथा बीस सैनिको को छोडकर बाकी सब रात के अंधकार मे शहर छोडकर कही चले गये। इस परिस्थिति मे अंग्रेज सेनापति हचिसन ने अपने साथियो सहित भोपावर छोड दिया। क्रांतिकारियो ने 17 मील तक उनका पीछा किया। कैप्टन हचिसन ने झबुआ के राजा के यहा शरण ली, परन्तु अमझेरा के क्रांतिकारी सैनिक उन्हे मौत के घाट उतारने के लिए दृढ सकल्प थे। उसी समय इंदौर के होल्कर को समाचार मिला कि अमझेरा के राजा बख्तावर सिंह ने कैप्टन हचिसन तथा साथियो को बंदी बना लिया है। श्रीमती हचिसन, सर राबर्ट हैमिल्टन की पुत्री थी जिनसे होल्कर के निजी संबंध थे। वह श्रीमती हचिसन को अपनी बहन मानते थे। होल्कर ने बक्शी खुमनसिह को तीन पदातियो की पलटन, दो तोपें तथा 200 सवारो के साथ अमझेरा की ओर भेजा। बक्शी खुमनसिह को आदेश दिया गया कि अमझेरा को जलाकर राख कर दिया जाय और यदि अमझेरा के राजा ने अंग्रेज बंदियो के साथ दुर्व्यवहार किया हो, तो उन्हे जीवित या मृत पकडकर उपस्थित किया जाय। होल्कर के भेजे हुए सेनानियो ने श्री एव श्रीमती हचिसन एव अन्य बंदियों की रक्षा की। अमझेरा के क्रांतिकारियो ने भोपावर के डाकखाने तथा एजेंसी हाउस को लूट लिया। वे लूटे हुए धन को गाडी तथा हाथियो पर अमझेरा ले गये। उन्होने अंग्रेजो के राज्य के अंत की प्रसन्नतापूर्वक घोषणा कर दी।

11 जुलाई, 1857 को कैप्टन हचिसन तथा उनके साथी होल्कर के सेनानियो के साथ भोपावर आये। उन्होने राजा बख्तावर सिंह को लूट का धन वापस करने का आदेश दिया। राजा बख्तावर सिंह ने धन, तोपे तथा सैन्य-सामग्री वापस कर दी।

बक्शी खुमनसिंह ने अपनी डायरी मे लिखा है कि जुलाई 1857 मे अमझेरा के नागरिक अंग्रेजो के विरुद्ध हो गये थे। उनके साथियो को अमझेरा से होकर बाहर निकलने मे काफी कठिनाई हुई तथा उन्हे महोबा जाने के लिए दूसरा रास्ता लेना पडा। अमझेरा के क्रांतिकारियो ने होल्कर की सेना मे भी विद्रोह फैलाने का प्रयास किया। राजा बख्तावर सिंह के क्रांतिकारी सहयोगियों ने लिखा था कि वे उनकी सहायतार्थ शीघ्र पहुचने वाले हैं। कर्नल ड्यूरंड ने कैप्टन हचिसन के नेतृत्व मे अमझेरा का विद्रोह दबाने के लिए सेना भेजी। अमझेरा के क्रांतिकारियो का गढ अमझेरा से सात मील दक्षिण पश्चिम मे लालगढ के किले मे था। चार मील तक चारो ओर घना जगल था तथा वहा पहुचने का रास्ता बहुत बीहड था। किले की रक्षा के लिए मजबूत दीवार थी। अंग्रेज सेना के पहुचने पर राजा बख्तावर सिंह तथा अन्य क्रांतिकारियो ने किला छोड दिया। जब कैप्टन हचिसन किले मे पहुचे तो वहा केवल 20 व्यक्ति उपस्थित थे, जिन्होंने आत्म-समर्पण कर दिया। किले के अंदर चार

तोपें मिली। किले के कुछ हिस्से को स्वय क्रातिकारियो ने नष्ट कर दिया था। अग्रेज सेना को किले मे कोई धन अथवा खजाना नही मिला। क्रातिकारी खजाने को अपने साथ ले गये थे या घने जगलो मे छुपा दिया था। अग्रेज सेनापति को खाली किला देखकर बेहद निराशा हुई। अग्रेज सेनानियो ने गुस्से मे आकर किले के दरवाजो मे आग लगा दी और इस प्रकार अपनी क्रोधाग्नि को शान्त किया।

अमझेरा के राजा बख्तावर सिंह के साथ उनके कुछ साथियो ने विश्वासघात किया। उन लोगो ने उनके छुपने का गुप्त स्थान अग्रेज अधिकारियो को बता दिया। 11 नवबर, 1857 को लालगढ के किले के पास के जगलो से राजा बख्तावर सिंह को पकड लिया गया। उन्हे वहा से महोवा लाया गया, जहा उनके ऊपर मुकदमा चला। राजा बख्तावरसिंह ने मुकदमे की पूरी अवधि मे स्वय को निर्दोष प्रमाणित करने का कोई प्रयास नही किया। उन्होने अपने को अथवा अपने पूर्वजो को अग्रेजा का विश्वासपात्र बताकर उनकी सहानुभूति अर्जित करने का यत्न भी नही किया। मुकदमे की सारी गवाहिया मौखिक रूप से ली गई थी। न्यायाधीश, पुलिस तथा अभियोक्ता के कार्य एक ही व्यक्ति मे केद्रित थे। मुकदमे की सारी कायवाही अग्रेजो द्वारा निर्धारित कानून पद्धति के विरुद्ध थी। इसी न्यायालय ने राजा बख्तावर सिंह को फासी की सजा दी।

वीर क्रातिकारी राजा बख्तावर सिंह को 10 फरवरी, 1858 को इदौर मे फासी पर लटका दिया गया। अमझेरा राज्य को जब्त कर लिया गया। अमझेरा की रानी ने एक अर्जी कैप्टन हचिसन को दी थी। आवेदन-पत्र मे कहा गया था कि राजा बख्तावर सिंह का छोटा सा बच्चा रघुनाथ सिंह निर्दोष है तथा उसे अमझेरा का राजा बना देना चाहिए। अग्रेजो ने रानी का कोई भी तर्क सुनसे से इकार कर दिया। अग्रेजो ने अमझेरा राज्य ग्वालियर के सिंधिया को पुरस्कार स्वरूप सौंप दिया। उन्होने सिंधिया को आदेश दिया कि राज्य के कुछ अश स्वामिभक्त लोगो मे इनाम के रूप मे बाट दिये जायें। अग्रेजो की इस दुहरी नीति से ग्वालियर के सिंधिया की शक्ति सीमित रही तथा विश्वासपात्र लोग इनाम पाकर प्रसन्न हो गये।

अग्रेजो ने देशभक्त राजा के परिवार को कोई सहायता नही दी। अमझेरा राज्य-परिवार के व्यक्तिगत कागजो से पता चलता है कि उन्हे भयकर निर्धनता और कठिनाइयो से जूझना पडा। विद्रोही राजा के परिवार की सहायता करने से भी लोग घबराते थे।

राजा बख्तावर सिंह ने अपने प्राणो की आहुति देकर देश के प्रति अपने कर्त्तव्य को निभाया और उनके परिवार ने असाध्य कष्ट झेलकर अपनी श्रद्धा के सुमन भारत मा के चरणो मे अर्पित किये।

# भास्करराव बाबासाहब

1857 की क्रांति ने समूचे उत्तरी भारत को झकझोर दिया था। परन्तु दक्षिण भारत भी क्रांति की लपटो से अछूता नही रहा। बाम्बे-प्रेसीडेंसी मे नारगुण्ड, सतारा, कोल्हा-पुर, सावतवाडी आदि स्थानो पर अग्रेजो के विरुद्ध विद्रोह हुआ। नारगुण्ड के राजा का नाम भास्करराव बाबासाहब था। बाबासाहब की रानी बहुत वीर थीं तथा वह अंग्रेजों की कट्टर शत्रु थी। रानी की देशभक्ति अद्वितीय थी। वह देश के लिए बड़े से बड़ा त्याग करने के लिए तत्पर रहती थीं। वह सदैव बाबासाहब को अग्रेजो के विरुद्ध लडने के लिए प्रेरित करती रहती थीं। नाना धुधूपत के दूत दक्षिण भारत तक भी आते रहते थे, जिसके कारण घाटो के ऊपरी व निम्नवर्ती भागो मे विद्रोह को प्रेरणा मिली।

नारगुण्ड दक्षिणी मराठा प्रदेश में एक छोटा सा राज्य था तथा बेलगाव से साठ मील पूर्व की ओर स्थित था। राजा भास्करराव के पूवज नारगुण्ड पर दो सौ वर्ष से राज्य कर रहे थे। अग्रेजो ने राजा भास्करराव बाबासाहब को गोद लेने के अधिकार से वचित कर दिया। नारगुण्ड की रानी का हृदय आक्रोश से भर उठा। उन्होने प्रण किया कि वह अपना समस्त जीवन फिरगियो के विनाश म लगा दगी। रानी नारगुण्ड की प्रेरणा पर भास्करराव बाबासाहब ने 25 मई, 1858 को अग्रेजों के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। राजा भास्कर-राव ने अग्रेजो का आधिपत्य स्वीकार करने से इन्कार कर दिया और उनके राज्य मे विद्रोह का झडा लहरा उठा। अग्रेजो की राजकीय घोषणा के अनुसार भारतीय राजाओ से उनके हथियार रखवाये जाने का आदेश हुआ था। नारगुण्ड के राजा पर भी यह आदेश लागू होता था। उनके किले के ऊपर तोपें लगी हुई थी। राजा ने स्पष्ट शब्दो मे तोपें वापस करना अस्वीकार नही किया, परन्तु उन्होंने कहा कि तोपो को अग्रेजो तक ले जाने के लिए उनके पास वाहन नही हैं। तोपे राजा के पास ही रहीं। यह राजकीय आदेशो का स्पष्ट उल्लघन था। राजा भास्करराव तोपो को अपने पास रखना चाहते थे तथा वाहन की बात केवल बहाना मात्र थी। यह क्राति का सकेत था। अग्रेज अधिकारियो ने भास्करराव बाबासाहब से बलपूवक तोपें छीनने का निणय लिया। मानसन उस क्षेत्र के पोलीटिकल एजेंट थे। वह स्वय जाकर व्यक्तिगत रूप से राजा भास्करराव से बात करना चाहते थे। मानसन का राजा से पूव परिचय था तथा उन्हे अपने ऊपर दृढ विश्वास था कि वह राजा को क्राति-कारियो से विमुख कर देगे। मानसन अपने सैनिको के साथ, रामदुग के शासक से मिलते हुए, नारगुण्ड की ओर बढे। उन्होने रामदुग के राजा से कहा कि वह नारगुण्ड जा



बाबासाहब और उनके साथी बन्दी बना लिए गये।

रहे हैं और राजा भास्करराव को उचित परामर्श देना चाहते हैं। रामदुर्ग के शासक ने उत्तर दिया—"आपको नारगुण्ड नही जाना चाहिए। वहा का राजा भास्करराव विद्रोही हो गया है।" मानसन पर इस बात का कोई प्रभाव नही पडा और वह अपने लक्ष्य के लिए आगे बढे। 29 मई, 1958 को वह एक गाव के पास रुके। वह अपनी "पालकी" मे आराम कर रहे थे—सशस्त्र सैनिक व अगरक्षक उनके चारो ओर थे। रात्रि के समय नारगुण्ड के राजा ने अपने साथियो के साथ मानसन पर आक्रमण कर दिया। लडाई मे मानसन के सशस्त्र रक्षक दल के 16 सैनिक मारे गये। मानसन को भी मार डाला गया। उनके सिर को काट लिया और धड वही जलाकर राख कर दिया। कपनी की सेना हारकर भाग गयी। अगले दिन मानसन का कटा हुआ सिर नारगुण्ड की फसील पर लटका दिया गया।

बेलगाव मे विद्रोही राजा द्वारा मानसन की हत्या का समाचार मिला, तो अग्रेज बौखला गये। उन्होने कर्नल माल्कोम के अधीन 28 वी और 74 वी पलटन, कुछ अश्वारोही सेना और दो तोपें नारगुण्ड के क्रातिकारी राजा बाबासाहब के समूल नाश के ध्येय से भेजी। 1 जून को यह सेना नारगुण्ड की ओर बढी। भारतीय इतिहासकारो का मत है कि राजा के सौतेले भाई ने क्राति मे भाग लेना अस्वीकार कर दिया और अग्रेजो से जाकर मिल गया। इस बात से अग्रेजो को शक्ति मिली। 1 जून, 1858 को अग्रेज सेना ने नारगुण्ड पर आक्रमण किया। नारगुण्ड का किला मैदानी क्षेत्र से 800 फुट ऊचाई पर तथा शहर मैदानी क्षेत्र मे बसा हुआ था। राजा भास्करराव ने शहर से लगभग एक मील दूर, अपने डेढ दो हजार साथियो के साथ, डेरा डाल रखा था। अग्रेज सेना को आगे बढते देखकर राजा भास्कर राव की सेना पीछे हट गयी, परन्तु तुरन्त ही वे फिर आगे बढे और शत्रु पर आक्रमण कर दिया। राजा भास्करराव बाबासाहब हाथी पर बैठे थे। सैनिको के हाथो मे तलवारें थी। वे वीरता-पूवक विद्रोह के नारे लगा रहे थे। अनायास ही अग्रेजो की अश्वारोही और पदाति सेना ने उन पर आक्रमण कर दिया। क्रातिकारी सेना तितर बितर हो गयी और शहर की तरफ भाग गयी। अब अग्रेज तोपखाने ने विध्वसक गोलाबारी आरम्भ कर दी। मालकोम ने देखा कि शहर की ओर का एक दरवाजा खुला हुआ है। समस्त सेना उसी राह से शहर के अदर घुस गयी। समस्त क्षेत्र पर मालकोम का आधिपत्य हो गया। किले पर अब भी राजा भास्कर-राव का अधिकार था। किले के ऊपर से धाय-धाय गोली बरस रही थी। मालकोम को उस क्षेत्र का पूरा ज्ञान नही था। उन्होने रात भर प्रतीक्षा करने का निणय लिया। 2 जून को प्रात काल सात बजे वह किले की ओर बढे। दुग का मार्ग बीहड था। चढाई दुगम और ऊबड-खाबड थी। अग्रेज सेनापति किले के मुख्य द्वार को बारूद से उडाना चाहते थे। अग्रेज सेना आगे बढती गयी। ऊपर एक व्यक्ति दिखाई दिया। अग्रेज सेना ने तुरन्त गोली दागी। उधर से भी पत्थरो की वर्षा होने लगी। एक मराठा अश्वारोही किले की दीवार पर चढ गया और उसने अदर जाकर किले के मुख्य द्वार को खोल दिया। समस्त सेना किले के अन्दर घुस

गयी। किले के अदर केवल तीन व्यक्ति उपस्थित थे। सेनापति ने कहा कि यदि वे चुपचाप आत्मसमपण कर देंगे तो उन्हे प्राणदान दिया जायेगा। तीनो व्यक्तियो ने अपूर्व बलिदान दिया। उन्होने आत्मसममपण नही किया। वे किले की दीवार पर से कूद पड और वही उनका शरीर खील खील हो गया। मदिर के ब्राह्मण ने किले के भीतर कुए मे कूदकर अपने आत्म-सम्मान की रक्षा की। बेलगाव मे मानसा की हत्या के प्रति बेहद आक्रोश था। पुलिस सुपरिंटेडेंट सौटर भी राजा भास्करराव से बदला लेने के लिए बेलगाव से नारगुण्ड की ओर बढे। एक दिन आराम करने के उपरात मालकोम की सेना गुडक की ओर बढी तथा सौटर की सेना के साथ मिल गयी। पुलिस सुपरिंटेंडेंट सौटर ने क्रातिकारियो को कोपाल नामक स्थान पर हराया और वहा का किला अपने अधिकार मे ले लिया। जिस समय नारगुण्ड के मैदान मे लडाई हो रही थी और अग्रेज सेना भारतीय सेना पर धुआधार गोलाबारी कर रही थी, राजा भास्करराव अपने साथियो के साथ वहा से निकल गये थे। 2 जून को सौटर को राजा भास्करराव के विषय मे सूचना मिली। अग्रेजी सेना सध्या-काल तक राजा का पीछा करती रही। उन्हे वह रामदुर्ग के निकट मूलपुरवा नदी के किनारे जगल मे आराम करते हुए मिल गये। राजा भास्करराव आगे बढने की तैयारी मे थे, परन्तु सौटर की सेना ने उन्हे चारो ओर से घेर लिया और उन्हे तथा उनके साथियो को बदी बना लिया।

अग्रेज-अधिकारी राजा भास्करराव को बदी बनाकर बेलगांव लाये। वहा पर विशेष न्यायालय मे उन पर मुकदमा चलाया गया। उन पर "विद्रोह तथा हत्या" का आरोप लगाया गया था। राजा की समस्त सपत्ति तथा नारगुण्ड राज्य को जब्त कर लिया गया। 12 जून, 1858 को राजा भास्करराव बावासाहब तथा उनके छह साथियो को फासी पर लटका दिया गया। उवल के राजा ने भी राजा भास्करराव की सहायता की थी। उन्हे भी तोप से उडा दिया गया।

नारगुण्ड की वीर रानी तथा राजमाता ने मालप्रभा नदी मे डूबकर अपने आत्म-सम्मान की रक्षा की। यह वीर प्रसवनी भूमि की राजमाता और राज-रानी का गौरवशाली बलिदान था।